मान मन्दिर बरसाना

मासिक पत्रिका

मार्च २०२०

वर्ष ४, अंक ३

मूल्य १०/-

मान मन्दिर
सेवा संस्थान ट्रस्ट
गहवरवन, बरसाना (मथुरा)
www.maanmandir.org

बीना (म.प्र.) में साध्वी मुरलिकाजी
श्रीमद्भागवत् कथामृत की वर्षा करते हुए

ललितपुर (उ.प्र.) में साध्वी मुरलिकाजी
श्रीमद्भागवत् कथामृत की वर्षा करते हुए

अन्तराष्ट्रीय कथावाचक
प. रामजीलालजी शास्त्री श्रीमद्भागवत् कथा
श्रवण कराते हुए, जुरहरा (राज)

कटार, सवाई माधोपुर (राज.) में बाल साध्वी गौरीजी श्रीमद्भागवत् कथामृत का पान कराते हुए

नरसिंहपुर (मध्य प्रदेश) में बाल साध्वी गौरी जी श्रीमद्भागवत् कथा एवं बाल साध्वी मधुवनी जी भक्तमाल कथा कहते हुए

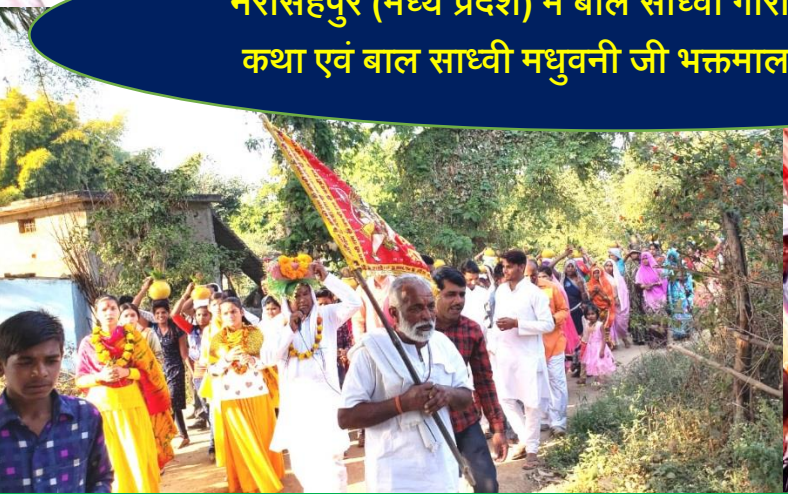

मान मन्दिर के साधु संतों द्वारा
अलवर जिला (राज.) में
हरिनाम प्रचार

पूज्य गुरुदेव संत श्री प्रियाशरण बाबा की
पुण्यतिथि के अवसर पर श्री माताजी गौशाला
में श्री बाबा महाराज का उद्बोधन

स्वर्गीय मानमन्दिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक / मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा gupta offset printer's A-42 industrial area, new delhi से
मुद्रित एवं मानमन्दिर सेवा संस्थान गह्वरवन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित
RNI REFRENCE NO.1313397 REGISTRATION NO.- UP BIL-2017/72945 TITLE CODE UP BIL – 04953 POSTAL REGD NO. MTR 093/2018-20

अनुक्रमणिका

विषय-सूची — पृष्ठ- संख्या

१ बरसाने चलो खेलें होरी.....०३
२ श्रीयुगलमंत्र से युगलोपासना की संसिद्धि ०६
३ 'श्रीबरसाना धाम' का स्वरूप.....०८
४ श्रीजी की कृष्णाराधना.....११
५ ब्रजगोपिकाओं का कृष्ण-प्रेम.....१४
६ परम सहिष्णु भक्त 'श्रीसदनकसाईजी'.....१७
७ भागवतधर्म की प्रेरिका 'श्रीगीताजी'.....२१
८ असाध्य रोगनाशक 'गौसेवा-व्रत' २२
९ भवसिन्धु का बेड़ा 'श्रीभागवतजी'.....२५
१० भारतीय-संस्कृति का आधार 'गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति'.....२७
११ रंगीली होली नाटिका 'द्रोपदी' प्रस्तुति.....३०

चूनरिया रंग में बोर गयौ कान्हा वंशी वारौ ||

चूनर नई बड़ी चटकीली
चटकीलौ रंग घोर गयौ, कान्हा वंशी वारौ |
जान न पाई कित ते आयो
औचक ही झकझोर गयौ, कान्हा वंशी वारौ |
गालन मल्यो गुलाल निरदई
घूँघट कौ पट छोर गयौ, कान्हा वंशी वारौ |
बरजन लगी हाथ पकरे जब
बैंया तनक मरोर गयौ, कान्हा वंशी वारौ |
लिपटन लग्यौ नन्द कौ मो ते
हियरे प्रेम हिलोर गयौ, कान्हा वंशी वारौ |
खैंचा खैंची करकें छूटी
मोतिन की लर तोर गयौ, कान्हा बंशी वारौ |
ऐसौ रसिया कब मैं देखूँ
छोटो सो मन चोर गयौ, कान्हा वंशी वारौ |
होरी खेलन के दिन मोते
डोर प्रीति की जोर गयौ, कान्हा वंशी वारौ ||

— पूज्यश्री बाबा महाराज कृत

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो |

— पूज्यश्री बाबा महाराज कृत

संरक्षक- श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री, मानमंदिर सेवा संस्थान,
गह्वरवन बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)
(Website :www.maanmandir.org)
(E-mail :ms@maanmandir.org)
mob. : 9927338666, 9837679558

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकाले व मासिक, त्रैमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवा द्रव्य किसी विश्वसनीय गौ सेवा प्रकल्प को दान कर गौ-रक्षा कार्य में सहभागी बन अनंत पुण्य का लाभ लें | हिन्दू शास्त्रों में अंश मात्र गौ सेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है |

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

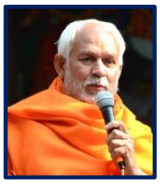

प्रकाशकीय

भगवान् की शरण में आप पहुँचते हैं तो इस बात की चिंता मत करो कि हमारे अनंत पापों का क्या होगा ? क्योंकि भगवान् का सहज स्वभाव है – **कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू ॥** भगवान् बड़े कृपानिधान हैं, वे भुजा फैलाकर करुणा से हमारी ओर देख रहें हैं, फिर भी कितने अभागे हैं हम ! प्रभु की शरण नहीं ले पाते | भगवान् जैसी करुणा भक्तों में भी होती है | महाराज जनक जब नरक देखने पहुँचे तो वहाँ यमयातना भोग रहे समस्त जीवों को विदेहराज जनकजी के दर्शनमात्र से बड़ी शीतलता का अनुभव हुआ और वे प्रार्थना करने लगे कि महाराज ! आप यहाँ से जाओ नहीं | जनकजी ने करुणावश वहीं रहना स्वीकार कर लिया | अंत में जनकजी के कहने से सभी को भगवद्धाम में भेज दिया गया | करुणादि दिव्य गुणों के कारण भगवान् ऐसे भक्तों के सेवक बन जाते हैं | जीव-कल्याण का सबसे बड़ा हेतु भगवन्नाम है | भक्तजन सदा नामगान करके समस्त जीवों का उपकार किया करते हैं | श्रीभगवन्नाम-दान न केवल अपना अपितु सम्पूर्ण विश्व का मंगल करता है | हरिनाम के प्रभाव से समस्त आसुरी-शक्तियों का विनाश सहज हो जाता है | 'नाम-संकीर्तन' के प्रसारण में कलियुग अवश्य बाधा पहुँचाता है, बहुत-सी बाधाएँ आने लगती हैं परन्तु धैर्यपूर्वक यदि तुम लगे रहोगे तो कलियुग की समस्त शक्तियाँ नष्ट हो जाएँगी | कलियुग में भगवन्नाम का बहुत अधिक महत्व बताया गया है |

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् | कलौ नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा || (श्रीचैतन्यमहाप्रभुजी)

कलि में नाम प्रभाव को जानकर ही परीक्षित ने कलि का वध नहीं किया | कृष्ण-कीर्तन के अतिरिक्त इस युगमें और कोई दूसरा साधन नहीं है |

"कलियुग सम नहिं आन युग जो नर कर विस्वास | गाइ राम गुन गन विमल भव तर बिनहिं प्रयास ||"

(गोस्वामी तुलसीदासजी)

तप, शौच, दया आदि धर्म के चरण भले ही नष्ट हो गए हों | एक चरण के रहते भी कलियुग के समान अन्य युग नहीं है | अन्य युगों के भक्त भी कलियुग में जन्म लेना चाहते हैं | विशुद्ध भक्ति केवल कलियुग में ही संभव है | श्रीभगवान् ने कलियुग के भक्तों के साथ बहुत लीलाएँ की हैं | नरसीजी के पास ५२ बार भगवान् आये | मीराजी का उदाहरण विश्व-व्यापत है | केवल श्रीनारायणपरायण (भगवदाश्रित) भक्तगण ही कलियुग में अवतरित होते हैं | इस युग में किसी योग, जप, तप, स्वाध्याय की आवश्यकता नहीं है | केवल भगवान् के नाम का आश्रय ले लो और बिना किसी विशेष प्रयास के भवसागर से पार हो जाओगे | सुनने वाले को भी वही फल मिलता है जो नामगान करने वाले को मिलता है |

प्रबंधक

राधाकांत शास्त्री

श्रीमान मन्दिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

बरसाने चलो खेलें होरी

श्रीबाबामहाराज के प्रवचन 'रंगीली-होली-लीला' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी अचलप्रेमा जी, मानमन्दिर, बरसाना

जब ग्वाल-बाल नन्दगाँव से पीली पोखर आते हैं और आपस में कहते हैं – **"बरसाने चलो खेले होरी बरसाने"** चलो बरसाने, क्यों? क्योंकि वहाँ लाला, राधा रानी के साथ बसते हैं। जब बरसाने पहुँच जाते हैं तो राधा रानी से बोलते हैं कि हे राधे ! हमें दर्शन दो।**"दरसन दे निकस अटा में ते ---"** राधा रानी से प्रार्थना किया, श्रीजी महल के बाहर आकर खड़ी हो गयीं। नीचे नन्दलाल खड़े हैं। अब राधा रानी कैसे खड़ी हैं महल में और कैसे दर्शन दे रही हैं, वह छवि देखो। श्याम सुन्दर की पिचकारी का रंग जब ऊपर महल तक नहीं पहुँचा तो प्रेम की मार कर रहे हैं, ऊपर प्रीति भेज रहे हैं। बरसाना में रंगीली होरी ५००० वर्ष से भी अधिक पुरानी है और इसका प्रमाण 'गर्ग संहिता' में है। ब्रज में नौ उपनन्द थे, जो सभी गुणों से युक्त व धनवान-शीलवान थे। इनके घर में देवों के वरदान से गोप कन्यायें उत्पन्न हुईं। वे सभी राधा रानी की सखियाँ अनुचरी थीं। एक समय बसंत ऋतु आयी, सभी ने होरी का उत्सव प्रारम्भ करना चाहा परन्तु होरी उत्सव प्रारम्भ कैसे हो, श्रीजी तो 'मान लीला' में हैं। सब सखियाँ श्रीजी के पास जाती हैं और कहती हैं कि हे राधा रानी ! हे चन्द्रबदने ! हे मधुमान करने वाली मानिनी ! हमारी बात सुनो, यह होरी का उत्सव है ! इस उत्सव को मनाने के लिये तुम्हारे कुल में ब्रज के भूषण नीलमणि नन्दलाल आये हुए हैं। श्याम सुन्दर की ऐसी शोभा है –

"श्रीयौवनोन्मद विघूर्णित .... स्वपदारुणेन"

(ग.सं.मा.खं.१२/८)

"हे राधे ! यौवन की शोभा से ब्रजराज के नेत्र मद से झूम रहे हैं। घुंघराली, काली-काली लटूरियाँ उनके गोल-गोलकपोलों पर लटक रहीं हैं और उनकी लटूरियों की, उनके केशों की जो छटा है, उसका तो वर्णन ही नहीं किया जा सकता। पीला जामा बड़ा घेरदार है और पाँवों में नूपुर छम-छम बज रहे हैं। बरसाने की ओर से चले आ रहे हैं। यशोदाजी के द्वारा धारण कराया गया मुकुट सूर्य की तरह प्रकाशमान हो रहा है। कुण्डल ऐसे चमक रहे हैं जैसे बिजली चमक रही हो। उनके गले में बनमाला ऐसी लगती है जैसे बादल बिजली के साथ आ गए हों। उनका सारा शरीर लाल रंग से रंगा हुआ है और उनके हाथ में पिचकारी है। हे राधे ! वे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।" इस होरी को नन्ददास जी ने इस तरह से गाया है। राधा रानी से सखियाँ कहती हैं कि हे राधे ! आज के दिन आप मान क्यों करती हैं? मान छोड़कर चलिये होरी के मैदान में –

"अरी चल नवल किशोरी गोरी भोरी होरी खेलन जांहि"

(श्रृंगाररससागर)

कैसी सुन्दर चाँदनी रात है ! ऐसे में आपको कैसे घर में बैठना अच्छा लगता है? हे राधे ! वहाँ हर गाँव के गोपी-ग्वालों के टोल जुड़ रहे हैं। उधर श्याम सुन्दर आये और उन्होंने देखा कि कोटि-कोटि गोपियाँ हैं किन्तु उनकी आँखें जिसे ढूँढ़ रही थीं, वो राधा रानी वहाँ नहीं हैं। श्याम सुन्दर ने चारों ओर देखा पर श्रीजी नहीं थीं, नेत्र नीचे करके उदास हो गये। करोड़ों गोपियाँ हैं पर राधा रानी नहीं हैं। श्याम सुन्दर ने विशाखा जी को आँखों से पूछा कि 'श्रीजी' कहाँ हैं ? विशाखा ने कहा – "श्रीजी नहीं आईं", संकेत कर दिया कि अभी जाओ, तो विशाखा जी जाकर श्रीजी से बोलीं..."अब आप देर मत करो। बरसाने में श्याम सुन्दर बन-ठन के आये हैं, अब तुम चलो।" श्रीजी मुस्करा गयीं तो विशाखा जी समझ गयीं कि लाड़ली जी मान गयी हैं। विशाखा जी ने बाँह पकड़ कर उठा लिया कि अब चलो और श्रीजी का श्रृंगार किया। श्रीजी जब

चलीं तो ऐसे चल रही हैं कि कमर में लचक आ रही है। उनका रूप ऐसे लगता है जैसे कि चमकती हुई ज्योति ! जैसे हवा में दीपक की ज्योति छनछनाती है ! चलते समय एक लट श्रीजी के गालों पे लटक आयी है और वो लट लटक कर गालों में जो नासिका का मोती है, उस मोती में उलझ गयी। नन्ददास जी कहते हैं कि जैसे कोई मछली फाँसने वाला पानी में काँटा डालता है तो काँटे के नीचे आटे की गोली लगा देता है और मछली उसमें फँस जाती है। वैसे ही श्रीजी की एक घुँघराली लट जो लटकी, वह तो काँटा थी, लट मोती में उलझ गयी तो मोती आटे का चारा थी और मछली फँस गयी ! मछली क्या था ? श्यामसुन्दर का मन ! चारों ओर सखियाँ और बीच में श्रीजी जा रही हैं तो ऐसा लगता है कि चारों ओर कुमुदनियाँ खिल रहीं हैं, एक चाँद जा रहा है, ये गौर चाँद राधा रानी हैं। ये चाँद आज पैदल जा रहा है। वहाँ पर अब खेल शुरू हुआ, पहले तो गुलाल से खेल हुआ। गुलाल के खेल के बीच में से श्याम सुन्दर ने श्रीजी को धोखे से पिचकारी मार दी तो श्रीजी ने मान कर लिया कि गुलाल से खेल हो रहा था, तुम जब हारने लगे तो बेइमानी क्यों की ? हुआ ये कि श्रीजी ने मान कर लिया और खेल रुक गया। यह तो बड़ा गड़बड़ हो गया, सारा रस ही चला गया। ललिता जी के पास मुकद्दमा गया कि इसका फैसला क्या होगा? तो ललिता जी ने कहा कि आप जो चाहो वह दण्ड इनको दे दो। इन्होंने बेइमानी तो की ही है। बोलीं कि क्या दण्ड दिया जाये? अब क्या दण्ड हुआ ये भी सुनिए। गुलाल का खेल तो बहुत हुआ। गुलाल के खेल में जब श्याम सुन्दर हारने लग गये तो उन्होंने सबकी दृष्टि बचाकर बेइमानी की और श्रीजी को पिचकारी मार दी। श्रीजी बहुत चतुर हैं, वे जानती हैं कि अगर ये हारेंगे तो कोई न कोई बेइमानी जरुर करेंगे तो जैसे ही उन्होंने पिचकारी मारी, श्रीजी ने बड़ी चतुरता से मुड़कर उस धार को बाँये हाथ से रोक दिया। मारी तो थी श्याम सुन्दर ने कि सारा ऊपर से नीचे तक तर-बतर कर देंगे पर श्रीजी भी बड़ी खिलाड़ हैं। सारी धारा को अपने हाथ से रोक दिया पर फिर भी कुछ छींटे उनके गौर कपोलों पर आकर लग गये तो वह इतना अच्छा लग रहा था कि आप लोगों को हम क्या उपमा दें? जैसे अमरुद पर लाल-लाल छीटें जब पड़ जाते हैं तो बहुत अच्छे लगते हैं। वह इतनी अच्छी लगीं कि श्याम सुन्दर का होरी का खेल रुक गया और श्रीजी के पास आकर वो उन छींटों को देखने लग गये। ऐसी शोभा हुई उनकी कि खेल ही रुक गया। श्याम सुन्दर समझ गये कि श्रीजी जरुर मान में हैं। बोले कि चलो फिर से खेलें। जब श्याम सुन्दर विनती करते हैं तो श्रीजी बोलीं कि – जाओ, तुम बेइमान हो। सब सखियाँ इकट्ठी हो गयीं और मुकद्दमा पुनः ललिता जी के पास गया। ललिता जी ने कहा कि – इन्हें हम यह दण्ड देती हैं कि इनकी आँखों में काजल लगा दिया जाय। होरी में यह बहुत बड़ा दण्ड है। होरी का काजल ऐसे नहीं होता। होरी का काजल गाढ़ा पोता जाता है। बोलीं – "मंजूर है दोनों को?" यह बदला रस भरा है। श्रीजी ने दोनों हाथों की उंगलियों में काजल लिया। एक उंगली से नहीं, दोनों उंगली से काजल लिया। एक हाथ से उनका हाथ पकड़ लिया कि कोई गड़बड़ न करें और दूसरे हाथ से काजल ले, उनके नेत्रों को देख रही हैं। वो भी देख रहे हैं कि जल्दी से काजल लगाएँ। जैसे ही वह काजल का हाथ ले कर जाती हैं तो वह गाल हटा देते हैं। झगड़ा बढ़ा, खींचातानी में श्रीजी ने अपनी बाँयी भुजा से उनको ऐसे कस लिया कि उनकी गर्दन हिल नहीं पायी और काजल लगा दिया। यह लीला उसी दिन बरसाने में हुई। उसी के अंत में लिखते हैं कि श्रीकृष्ण को श्रीराधा रानी के हाथों से जब काजल लग गया तो अपना पटका राधा रानी को भेंट करके अपने घर चले गये। जो हार जाता है, वह पटका भेंट करता है। यह 'गर्ग संहिता' की होरी की लीला

सुनायी। जब बरसाने वाली नन्दगाँव में जाती हैं होरी खेलने तब गोपियाँ कहती हैं –

दरसन दै मोर मुकट वारे दरसन दै।
चंदा-सूरज तेरो ध्यान धरत हैं,ध्यान धरे नौ लख तारे।
गल बैजन्ती माला सोहै, कानन में कुंडल वारे।

रंगीली होरी के बारे में लिखा है कि जब श्रीकृष्ण बरसाने में होरी खेलने आते हैं, वह पूरे मद में होते हैं। क्या यह यौवन का मद है ? बोले – "नहीं-नहीं, अपनी जवानी का मद नहीं है, कुछ और बात है।" यौवन है श्रीराधा रानी पर और गर्व हो रहा है श्रीकृष्ण को ? **"लाड़लो गोरी के गुण गरबीलो"** यह विचित्र रस है ! श्रीकृष्ण अपने मद भरे नेत्र घुमा रहे हैं। उनके गालों पर लटूरियाँ छा रही हैं। उनकी ऐसी शोभा है, जैसे कोई नयी चूनरी लेकर फरफराती चली आ रही है। ये अदा है ! इस अदा से वो अपने जामा को हिलाते हुए चले आ रहे हैं। चरणों से नूपुरों की छम-छम आवाज आ रही है। इस तरह से श्रीकृष्ण मुकुट पहने, बरसाने में होरी खेलने आये हैं –

कान्हा धरे रे मुकुट खेलैं होरी।
उतते आये कुंवर कन्हैया इतते राधा गोरी॥
फेंट गुलाल हाथ पिचकारी, मारत भर-भर झोरी।
'रसिक गोविन्द' अभिराम श्यामघन जुग जीवौ यह जोरी॥

एक और बहुत सुन्दर पद है, जिसमें श्रीकृष्ण की बारात नंदगाँव से बरसाने में होरी खेलने जा रही है। नन्दगाँव से जब श्याम सुन्दर बारात में चले हैं तो श्रीकृष्ण के साथ सब देवगण भी होरी का स्वांग बना कर चल पड़े। उसमें ब्रह्मा जी आये हैं, महादेव जी आये हैं, शुकदेव जी आये हैं, सनकादिक भी आये हैं।

ये होरी उत्सव परम्परा आज तक बरसाने में चलती आ रही है। जो बरसाने में पाण्ड़े लीला से प्रारम्भ होती है। अष्टमी के दिन नन्दगाँव से पाण्ड़े जी होरी का निमंत्रण लेकर आते हैं –

नन्दगाँव कौ पाँड़े ब्रज बरसाने आयौ।
भरि होरी के बीच सजन समध्याने धायौ॥
पाँड़े जू के पायनि कों हँसि शीश नवायौ।
अति उदार वृषभानु राय सन्मान करायौ॥
पाँय धुवाय अन्हवाई प्रथम भोजन करवायौ।
भानु भवन भई भीर फाग कौ खेल मचायौ॥
समध्याने की गारी सुनत श्रवण सुख पायौ।
धाई आई और सखी जिनि सोंधो नायौ॥
शीशी सर ते ढोरी फुलेल अंग झलकायौ।
हनुमान की प्रतिमा मानौ तेल चढायौ॥
काजर सों मुख माढ़यौ वन्दन बिन्दु बनायौ।
कारे कर सहि चुवत मनौं चपरा चपकायौ॥
गज गामिनि गौछनि में तकि तुकमा लपटायौ।
देह धरें मानों फागुन ब्रज में खेलन आयौ॥
माथे तें मोहनी मठा कौ माट ढुरायौ।
मानों काचे दूध श्याम गिरवरहि न्हवायौ॥
लियौ लुगाइनि घेरि नरें नाना के आयौ।
तब श्री राधा राधा कहि अपनौ बोल सुनायौ॥
चंचल चन्द्र मुखीनि चहुँ धां तें जू दबायौ।
अहो भानु की कुँवरी शरण हौं तेरी आयौ॥
कोमल बानी सुनत गरौ राधा भरि आयौ।
बाबा जू कौ दगल ललो जू लै पहिरायौ॥
कीरति पाँय लागि लागि तातौ पय प्यायौ।
मन वांछित निधि दीनी तन तें ताप नसायौ॥

(श्रृंगाररससागर)

राम भगत प्रिय लागहिं जेही। तेहि उर बसहु सहित बैदेही॥ (रा.मा. अयो. १३१)

जिसको आपके भक्तों से प्रेम है, उसके हृदय में जाकर रहो। जो भक्तों में भेदबुद्धि करता है, घृणा करता है, वहाँ भगवान् नहीं आएँगे, चाहे सौ जन्म तुम साधु बनकर घूमते रहो।

श्रीयुगलमंत्र से युगलोपासना की संसिद्धि

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'नाम-महिमा' (२६/०५/२०१०) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी मीरा जी, मानमन्दिर, बरसाना

श्रीभागवतजी में भी वर्णन आया है –

ब्रह्महा पितृहा गोघ्नो मातृहाऽऽचार्यहाघवान् ।
श्वादः पुल्कसको वापि शुद्ध्येरन् यस्य कीर्तनात् ॥

(श्रीमद्भागवतजी- ६/१३/८)

ब्रह्म-हत्याएँ, मातृ-पितृ-हत्याएँ, गौ-हत्याएँ 'श्रीभगवन्नाम' से नष्ट हो जाती हैं, यहाँ तक कि अति अधम जाति के लोग जैसे - पुल्कस (कच्चा माँस खाने वाले), श्वाद (कुत्ते का माँस खाने वाले) आदि भी श्रीभगवान् के नाम-संकीर्तन से पवित्र हो जाते हैं | **"सुमिरत सुलभ सुखद सब काहु |"** नाम-संकीर्तन सबसे सरल-सरस व सुखमय साधन है, इसलिए अन्य कठिन साधनों (योग-यज्ञ, जप-तप, व्रत-पूजा आदि) में व्यर्थ भटकने वाले लोगों के चक्कर में आकर प्राण-संकट (मुसीबत) में नहीं पड़ना चाहिए | भक्तमाल-सुमेरु गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी विशुद्ध भक्तिमार्ग पर चलने वाले साधकजनों को सतत् सावधान रहकर सच्चा साधन करने के लिए कहा है –

एहिं कलिकाल न साधन दूजा |
जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा ||
रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि |
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -१३०)

सदा याद रखो – जीवन में कभी भी कठोर प्रायश्चित करने की बिल्कुल आवश्यकता नहीं है, क्योंकि श्रीभगवान् का नाम-संकीर्तन करने से तुम्हारे ही नहीं, सारे संसार के पाप नष्ट हो जाएँगे |

तस्मात् सङ्कीर्तनं विष्णोर्जगन्मङ्गलमंहसाम् ।
महतामपि कौरव्य विद्धयैकान्तिकनिष्कृतम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ६/३/३१)

संकीर्तन से सारे संसार का मंगल होगा | **'अंहसाम्'** माने बड़े-बड़े पाप, उसका प्रायश्चित यही कीर्तन है |

कर्मणा कर्मनिर्हारो न ह्यात्यन्तिक इष्यते ।
अविद्वदधिकारित्वात्प्रायश्चित्तं विमर्शनम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी ६/१/११)

कर्म से कर्म व कर्म-वासना का विनाश नहीं होगा, वह तो एकमात्र सच्ची आराधना करने से ही होता है |

अयं हि कृतनिर्वेशो जन्मकोट्यंहसामपि ।
यद् व्याजहार विवशो नाम स्वस्त्ययनं हरेः ॥

(श्रीमद्भागवतजी ६/२/७)

करोडों जन्म के पाप भगवन्नाम लेने से नष्ट हो जाते हैं | **"सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू "** इसलिए 'भगवन्नाम' सबसे सुखद-सुलभ 'साधन व साध्य' है | श्रीबाबामहाराज की नित्याराधना में छोटे-छोटे बच्चे घंटों, नाचते हैं; यदि इनको कह दो कि ध्यान लगाओ छः घंटे तो कभी नहीं कर सकते | **'सब काहू'** का तात्पर्य है चाहे छोटे-बड़े-बूढ़े हों या किसी भी जाति-पाँति के हों, सबके लिए 'भगवान् का नामगान करना, नृत्य करना' अति सहज व सरल है; चमार, भंगी, हत्यारा, सब कर सकते हैं | गायत्री मंत्र आदि में विधि-निषेध है लेकिन भगवन्नाम में सबका अधिकार है | चाहे वह महापापी, अति अधम, नीच ही क्यों न हो, सब कर सकते हैं -श्रीभगवन्नाम-संकीर्तन | "नाम के श्रवण मात्र से ही धामी श्री भगवान् व उनके धाम की प्राप्ति हो जाती है।" नामी की समस्त शक्ति नाम में निहित है अतः नाम की प्राप्ति को नामी भगवान् की ही प्राप्ति समझें। अतएव समस्त मतों की सफलता "नाम संकीर्तन" में मानी है –

मन्त्रतस्तन्त्रतश्छिद्रं देशकालार्हवस्तुतः ।
सर्वं करोति निश्छिद्रं नामसंकीर्तनं तव ॥

(श्रीमद्भागवतजी ८/२३/१६)

निष्काम भावपूर्वक नाम-संकीर्तन करने से हुए भक्तिमय चमत्कारों का आज प्रत्यक्ष उदाहरण है, कोई भी देख सकता है - 'श्रीमानमन्दिर' से प्रतिवर्ष पूर्णतः निःशुल्क चल रही है "श्रीराधारानी ब्रजयात्रा" जिसमें ४० दिनों

तक लगभग १५ से २० हजार तक ब्रजयात्री एक साथ पैदल संकीर्तन करते व सुनते हुए चलते हैं। श्री बाबा महाराज द्वारा जैसा श्रवण किया, आज से ७० वर्ष पूर्व ब्रजयात्राओं की बहुलता थी, रसमयता थी, वह आज नहीं रही। पद-यात्राएँ हट करके कारयात्रा रह गयीं। इसका कारण शारीरिक-दुर्बलता ही नहीं है अपितु भावनाओं की क्षीणता भी है। प्राचीन यात्राओं में पहले प्रत्येक वैष्णव **"श्रीकृष्णः शरणं मम"** का जप या कीर्तन करता था, वह अब नहीं रहा। इष्ट के नाम का सानिध्य न होने से रसमयता भी नहीं रही। पूज्य श्रीबाबामहाराज बताते हैं कि आज से ७० वर्ष पूर्व स्वामी श्रीहरिनामदासजी महाराज (रमणरेती वाले) की यात्रा में कुछ कठोर नियम थे। अखण्ड हरिनाम संकीर्तन चलता था, अतः सभी साधु व यात्रियों को दो दो घंटे कीर्तन का नियम था। आज अधिकांश यात्राओं में इस नियम की अवहेलना से क्षीणता आ गई। अल्पवयस्क "श्रीराधारानी ब्रजयात्रा" मात्र ३२ वर्ष पुरानी है किन्तु निरन्तर ब्रजभक्तिरसधारा के प्रवाह से सर्वप्रसिद्ध हो गई है चूंकि यहाँ यात्रियों को भगवान् के नाम से निरन्तर जोड़े रखा जाता है। श्रीमन्महाप्रभु चैतन्यदेव ने भी भगवन्नाम की सन्निधि को ही भगवान् की सच्ची कृपा बताई है –

नाम्नामकारि बहुधा निजसर्वशक्ति
स्तत्रार्पिता नियमितः स्मरणे न कालः।
एतादृशी तव कृपा भगवन्ममापि
दुर्दैवमीदृशमिहाजनि नानुरागः॥

(शिक्षाष्टक - २)

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे॥

इस महामन्त्र के अधिदैव भी श्रीयुगल सरकार हैं –

सर्वचेतोहरः कृष्णस्तस्य चित्तं हरत्यसौ।
वैदग्धीसारविस्तारैरतो राधा हरा मता॥

(श्रीजीवगोस्वामी कृत महामन्त्र व्याख्या से)

अपने अनुपम सौन्दर्य से, सबके मन का हरण करने वाली, श्रीहरि के भी चित्त को जो अपने चातुर्य से हर लेती हैं, वे हरा हैं। 'हरा' नाम होने के और भी अनेक कारण हैं, कुछ ही यहाँ बता रहे हैं – श्रीकृष्ण के द्वारा हरण होने से, श्रीकृष्ण को हरि-हरि पुकारने से, श्रीजी द्वारा वंशी का हरण होने से, भक्तों का कष्ट हरण करने से एवं श्रीकृष्ण के धैर्य का हरण करने से भी इन्हें 'हरा' कहते हैं। 'हरा' का सम्बोधन ही हरे है। 'राधा नाम' के श्रवणमात्र से जिनका आन्तरिक प्रेम अनन्त, अपरिसीम भाव-तरंगों से उद्वेलित हो संतुलन खो बैठता है, वे श्रीचैतन्यमहाप्रभु इसी कारण राधे को 'हरे' कहकर मन को संतुलित करते थे।

पद्मपुराणानुसार

शिवजी ने स्वयं नारद जी को कहा है – "देवर्षे ! परात्पर ब्रह्म श्रीकृष्ण ने ही मुझे 'श्री युगल मन्त्र' का उपदेश किया है। एक समय कमलापति श्रीनारायण भगवान् ने प्रसन्न होकर मुझे वर माँगने को कहा, तब मैंने अपना वाञ्छित वर माँग लिया, मुझे भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन प्राप्त हों, उन्होंने मुझे वृन्दावन जाने की आज्ञा की। वहाँ पहुँचने पर चतुर-सहचरी समुदाय से समावृत युगल-रसराज का दुर्लभ दर्शन प्राप्त हुआ। जिनके नील-पीत वदनाम्बुजों (मुख-कमल) की मिश्रित किरण एक दिव्य हरिताभ (श्रीभगवान् के प्रेम-प्रकाश की) ज्योति का सृजन कर रही थी। प्रसन्न मन श्रीहरि ने एक गोपन रहस्य खोला।" बोले – "हे रुद्र ! यदि तुम मुझे वश में करना चाहते हो तो मेरी प्राणेश्वरी का आश्रय लो एवं युगल मन्त्रोच्चारण करते हुए सदा मेरे इस धाम में वास करो" तब तक दया-धाम प्रभु मेरे दाहिने कर्ण में युगल मन्त्र का उपदेश देकर अन्तर्हित हो गए।

राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे।
राधे श्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे॥

(पद्मपुराण)

इस युगलमंत्र (रुद्र को कृष्ण-प्रदत्त युगलमन्त्र) के बिना युगलोपासना (श्रीराधामाधव युगल सरकार की आराधना) की सिद्धि सम्भव ही नहीं है। आदिसृष्टि से मूल अंशी श्रीकृष्ण की उपासना चली आ रही है।

'श्रीबरसाना धाम' का स्वरूप

श्रीबाबामहाराज के 'धाम-महिमा' सत्संग से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी वत्सला जी, मानमन्दिर, बरसाना

श्रीबरसाना के अनेक नाम हैं, जैसे रस की वर्षा होने के कारण **'बरसाना'**, श्रेष्ठ पर्वत चोटी होने के कारण **'वरसानु'** वृषभानु की राजधानी होने के कारण **'वृषभानुपुर'** और बड़ी शिखर होने के कारण **'वृहत्सानु'।** यद्यपि वृन्दावन में ही बरसाना है किन्तु श्रीजी के स्थाई निवास के कारण यहीं से सम्पूर्ण वृन्दावन रसमय बनता है। केवल प्रणाम करने से जो चिंतित वस्तुओं का दान करने वाली, ब्रजदेवियों की शिरस्थ चूड़ामणि, वृषभानु वंश की कुलमणि, निखिल रसामृत मूर्ति श्रीकृष्ण की विरहशामिनी शांतिमणि, निकुञ्ज भवन की शोभामणि हैं; वे श्रीजी हम सभी के हृदय की अमूल्यमणि जिस बरसाने में विराजती हैं, उस वृषभानपुर की दिशा को प्रणाम है –

"तस्या नमोऽस्तु वृषभानुभुवो दिशेऽपि"

(श्रीराधासुधानिधि - १)

यद्यपि पञ्चयोजन अर्थात् २० कोस (६० कि.मी) वृन्दावन सभी रसमय है किन्तु उस सम्पूर्ण वृन्दावन में व्यास जी को श्रीकृष्ण नहीं मिले किन्तु बरसाना रूपी वृन्दावन में मिल गये –

लागी रट राधा-राधा नाम ।
ढूँढ़ि फिरी वृन्दावन सबरो नन्द डिठोना श्याम॥
कै मोहन कै खोर साँकरी कै मोहन नंदगाँव।
'व्यास दास' की जीवन राधे धनि बरसानो गाँव ॥

(श्रीहरिरामव्यासजी)

यहाँ के वास की आस शिवजी और शेषजी भी करते हैं –

बरसाने के वास को आस करें शिव शेष।
ह्याँ की महिमा को कहे जहाँ कृष्ण धरे सखि वेष॥

सम्पूर्ण ब्रज-वृन्दावन का रत्न, वृषभानु भवन बरसाना में ही रहता है, जिसके प्रलोभन में 'सच्चिदानन्द ब्रह्म' चोर बनकर बरसाने आता है – **ब्रज में रतन राधिका गोरी।**
हर लीनी वृषभानु भवन ते नंदसुवन की चोरी॥

(श्रीकृष्णदासजी)

बरसाने में श्रीकृष्ण छद्म से सखी वेष धारण कर चोरी करने आते हैं। 'बरसाने' का यह गौरव क्यों है? इसका कारण है -

सुभग गोरी के गोरे पांय।
धनि वृषभानु धन्य बरसानो धनि राधा की माय।
जहाँ प्रगटी नटनागरि खेलत पति सों रति पछताय॥
जाके परस सरस वृन्दावन बरसत रसनि अघाय।
ताके शरण रहत काको डर कहत 'व्यास' समुझाय॥

(श्रीहरिरामव्यासजी)

हित हरिवंश जी ने बरसाने की लीला का गान किया है – **"चलो वृषभानु गोप के द्वार"** खोर (साँकरी), गिरि (ब्रह्माचल), खिरक (वृषभानु खेरा), वन (गहवर वन) – ये चारों केवल बरसाने में ही हैं। गहवर वन और खोर साँकरी की लीला 'स्वामी हरिदासजी' ने भी गाई है –

"हमारो दान मारयो इन"

अथवा

महावाणी में श्रीहरिव्यासदेवाचार्यजी ने भी गह्वरवन की लीला को स्मरण किया है –

"गहवर निकुञ्ज कुञ्ज के आगे अद्भुत ठौर"

यही कारण है कि ब्रह्माजी को रस प्राप्ति के लिए बरसाने में ही पर्वत बनने का आदेश स्वयं प्रभु ने दिया था।अथ

वृषभानुपुरोत्पत्ति माहात्म्य वर्णनं वाराहे पाद्मे च:-
पुराकृतयुगस्यान्ते ब्रह्मणा प्रार्थितो हरिः।
ममोपरि सदा त्वंहि रासक्रीडां करिष्यसि॥
सर्वाभिर्ब्रजगोपीभिः प्रावृट्काले कृतार्थकृत।

सतयुग के अन्त में ही ब्रह्मा जी ने श्रीकृष्ण के निकट प्रार्थना किया कि आप गोपियों के साथ मेरे ऊपर विहार करें। प्रभु ने कहा – "आप बरसाना जाकर पर्वत बन जाओ, वहीं तुम्हें लीला दर्शन होगा।" इसी से ब्रह्मा जी बरसाने में पर्वत बने। एक कथा आती है, बरसाने के पर्वतों के बारे में कि जब त्रिदेव सती अनुसुइया की परीक्षा लेने गये थे तो वहाँ सती ने ब्रह्मा, विष्णु, शिव को श्राप दिया कि तुमने बड़ा अमर्यादित व्यवहार किया है, इसीलिए जाओ, पर्वत बन जाओ तो तीनों देवता पर्वत बन गये और उनका नाम त्रिक् हुआ।

श्री भगवानुवाच –

ततो ब्रह्मन् ब्रजं गत्वा वृषभानुपुरङ्गतः ।
पर्वतो भवसि त्वं हि मम क्रीड़ां च पश्यसि ।
यस्माद् ब्रह्मा पर्वतोऽभूद् वृषभानुपुरे स्थितः ।

(श्रीनारायणभट्ट जी कृत ब्रजभक्तिविलास)

सूर्यवंशी महाराज दिलीप हुए, ये बड़े ही गौ भक्त थे। राधा रानी सूर्यवंशी थीं और राम जी भी सूर्य वंशी थे। इनकी परम्परा इस प्रकार है। महाराज दिलीप तक तो एक ही वंश आता है। दिलीप ने गौ भक्ति की क्योंकि उनको कामधेनु गाय का श्राप था। ये जब एक बार स्वर्ग में गये तो जल्दी-जल्दी में कामधेनु गाय को प्रणाम करना भूल गए थे, कामधेनु ने श्राप दे दिया कि तुम पुत्र की इच्छा से जा रहे हो, तुम्हें पुत्र नहीं होगा। ये श्राप उस समय दिलीप सुन नहीं सके थे क्योंकि आकाश में इन्द्र का ऐरावत हाथी क्रीड़ा कर रहा था। दीर्घकाल तक भी प्रयत्न करने पर उनको जब पुत्र की प्राप्ति नहीं हुई तब ये गुरु वशिष्ठ के पास गए। उन्होंने ध्यान करके बताया कि राजन्! तुम्हें तो श्राप है, तुम्हें पुत्र कभी हो ही नहीं सकता क्योंकि यह कामधेनु का अमोघ श्राप है। वशिष्ठ जी ने कहा – "तुम गौ सेवा करो, कामधेनु की पुत्री नन्दिनी हमारे पास है, वह भी कामधेनु है, एकमात्र वही इस श्राप को नष्ट कर सकती है", तब दिलीप ने अद्भुत गौ सेवा की। इनकी परीक्षा भी हुई, परीक्षा में सिंह ने आक्रमण किया और दिलीप ने अपना शरीर सिंह को दे दिया। सिंह बोला – "तुम इस साधारण गाय के लिए अपना शरीर क्यों नष्ट करते हो? जीवित रहोगे तो अनेक तरह की तपस्या आदि कर सकोगे।" ('रघुवंशमहाकाव्य २/५' में ये कथा आती है।) दिलीप ने कहा – "यह शरीर जीवित रखने से कोई लाभ नहीं, अगर हम गाय को नहीं बचा सकते, इससे तो मर जाना अच्छा है। मनुष्य को उतनी ही देर जीना चाहिए, जब तक मशाल की तरह उस में प्रकाश हो। अगर प्रकाश न रहे तो जीने से कोई लाभ नहीं, उससे अच्छा है मर जाना।" सिंह ने कहा – "तैयार हो जाओ मरने के लिए, दिलीप तैयार हो गए।" सिंह आकाश में ऊपर उछला, ये सिर नीचे करके बैठ गए, हिले नहीं कि सिंह हमारे ऊपर प्रहार करेगा। तब तक क्या देखते हैं कि एक फूलों की माला आकाश से उनके ऊपर आकर पड़ गयी। उन्होंने सामने देखा तो गाय मुस्कुरा रही थी, बोली – "मैंने तुम्हारी परीक्षा ली थी, तुम इसमें उत्तीर्ण हो गये हो। जाओ मेरी माँ का श्राप मिट गया। अब तुम्हारे एक बड़ा प्रतापी पुत्र होगा, जिसका नाम रघु होगा।" उस गौ सेवा को देख करके राजा दिलीप के लड़कों में से जो धर्म नाम के सबसे छोटे लड़के थे, उन्होंने कहा कि हमें राज्य नहीं चाहिए। हमें कुछ नहीं चाहिए। हम तो केवल गाय की सेवा करेंगे। उसी वंश में आगे चलकर अभयकर्ण हुए। शत्रुघ्न जी जब ब्रज में आये तो अभयकर्ण को साथ लाये क्योंकि ये भी बड़े गौ भक्त थे। शत्रुघ्न जी जानते थे कि यह भूमि गाय के लायक है। वाल्मीकि रामायण में एक प्रसंग आता है कि जब सीता जी वनवास के समय यमुना जी को पार कर रही थीं, यमुना जी को पार करते समय सीता जी ने यमुना जी की वन्दना की। उन्होंने देख लिया कि यह यमुना ब्रज से आ रही हैं। वाल्मीकिरामायण में ये प्रसंग वर्णित है –

कालिन्दीमध्यमायाता सीता त्वेनामवन्दत ।
स्वस्ति देवि तरामि त्वां पारयेन्मे पतिर्व्रतम् ॥
यक्ष्ये त्वां गोसहस्रेण सुराघटशतेन च ।
स्वस्ति प्रत्यागते रामे पुरीमिक्ष्वाकुपालिताम् ॥

(वा.रा.अयो.का.५५।१९, २०)

सीताजी ने कहा – "हे माँ ! मैं तेरी हजारों गायों से सेवा करुँगी।" सीताजी भी ब्रज भक्त थीं। जब अभयकर्णजी यहाँ आये तो बड़े प्रसन्न हुए और गौसेवा करने लग गए। इसीलिए रघुवंश का यह एक अलग वंश आता है, इन्हीं के वंश में रशंगजी हुए, जिन्होंने बरसाना बसाया है और इन्हीं के वंश में राधारानी का प्राकट्य हुआ। यह बरसाने का इतिहास है। रशंगजी के वंश में ही राजा वृषभानु और राधारानी हुई हैं। ये सूर्यवंशी थीं और श्रीकृष्ण चंद्रवंशी थे। महारानी कीर्तिजी धन्य हैं, जिनके यहाँ राधा रानी जन्मी। महारानी कीर्ति मानवी कन्या नहीं हैं, इनका अवतार हुआ है। किसी समय में अपने पूर्व जन्म से पहले ये तीन पितृश्वरों की दिव्य कन्यायें थीं। ये कथा शिवपुराण (पार्वती खण्ड, अध्याय-२) में आती है। जब ये श्वेतदीप गयीं तो वहाँ सनकादि आये। इन्होंने उठकर सम्मान नहीं किया तो उन्होंने श्राप दे दिया कि तुम मानवी बन जाओ। भगवान् ने कहा कि ये वरदान है, श्राप नहीं है। तुम्हें नित्य शक्ति को जन्म देने का अवसर मिलेगा। उन तीनों कन्याओं में से एक सीता जी की माँ बनी – '**सुनैना**', एक पार्वती जी की माँ बनी – '**मैना**' और एक राधिका जी की माँ बनी – '**कलावती**'। ये कलावती के रूप में प्रकट हुईं, जो महाराज सुचन्द्र की स्त्री बनीं। दोनों ने बड़ा तप किया। उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा जी प्रकट हुए और उनसे वरदान माँगने को कहा। इस तरह महाराज सुचन्द्र जी को मोक्ष का वर प्राप्त हुआ। कलावती जी बोलीं कि – ब्रह्मा, मैं तुमको श्राप दे दूँगी। तुमने मेरे रहते इनको मोक्ष क्यों दिया? ब्रह्माजी घबरा गए क्योंकि ये महासती थीं। वह बोले कि ठीक है, ये कुछ दिन तक यहाँ ऊपर रहेंगे और फिर तुमको गोलोकेश्वरी की माँ बनने का सौभाग्य मिलेगा, उसके बाद तुम्हारे साथ ही धाम में जायेंगे। वो ही महाराज सुचन्द्र और वही कलावती फिर से यहाँ प्रगट हुए। कलावती, कीर्ति हुईं और इनकी कूँख से श्रीराधारानी भादों शुक्ल अष्टमी को प्रकट भईं।

यहाँ श्री नन्दनन्दन श्री राधिका से मोहित होकर नित्य रहते हैं –

परं नित्यं राधापदकमलमूले ब्रजपुरे ।
तदित्थं वीथीषु भ्रमति स महालम्पट मणिः ॥

(श्रीराधासुधानिधि - २३२)

सोई तौ बचन मोसौं मानि तैं मेरौ लाल मोह्यौ री साँवरौ । 'श्रीहरिदास' के स्वामी स्यामा कुञ्जबिहारी पै वारौंगी मालती भाँवरौ ॥ (केलिमाल–४४)

बरसाना गाँव ब्रह्माचल पर्वत के नीचे है। ब्रह्माचल पर्वत जो ब्रह्माजी का अंग ही है। उनके मुख रूप चार शिखरों पर चार गढ़ हैं (१) मानगढ़ (२) दानगढ़ (३) विलासगढ़ (४) भानुगढ़। जिन पर क्रमशः वृषभानु-भवन (भानुगढ़), दानलीला (दानगढ़), झूलन लीला व विलास लीला (विलासगढ़) एवं मान लीला (मानगढ़) हुई है। सिंहपौर पर ब्रह्मा जी का विग्रह भी है जिसे भक्तजन प्रणाम करके अन्य चारों गढ़ों के दर्शन करते हैं।

तुम निरपराध भजन करते जाओ, भगवान् तुम्हारी जिम्मेदारी अपने-आप लेंगे, स्वयं हृदय में आकर तुम्हारे मैल को दूर कर हृदय को स्वच्छ करेंगे, योगक्षेम धारण करेंगे।

भक्ति का मूल है 'दैन्य'। सबसे पहले चैतन्य महाप्रभु जी ने यही शिक्षा दी –

तृणादपि सुनीचेन तरोरपि सहिष्णुना ।
अमानिना मानदेन कीर्तनीयः सदा हरिः ॥ (शिक्षाष्टक – ३)

तिनका से भी छोटे बनो फिर और बातें स्वयमेव आ जायेंगी – सहिष्णुता, अमानिता, मानदेनता, भगवान् का कीर्तन आदि।

श्रीजी की कृष्णाराधना

श्रीबाबामहाराज के 'राधासुधानिधि' सत्संग से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी चंद्रमुखी जी, मानमन्दिर, बरसाना

श्रीराधारानी तुलसी की पूजा करती हैं और गर्ग जी को बुलाकर आश्विन शुक्ल पूर्णिमा से कार्तिक पूर्णिमा तक व्रत का अनुष्ठान करती हैं। तुलसी जी प्रगट होती हैं, श्रीराधारानी को अपनी भुजाओं में लपेट लेती हैं और कहती हैं कि, हे राधे ! बहुत शीघ्र, श्रीकृष्ण से तुम्हारा मिलन होगा। उसी समय श्रीकृष्ण एक विचित्र गोपी बनकर के आते हैं। अद्भुत गोपी ! ऐसी सुन्दरता जिसका वर्णन नहीं हो सकता। गर्ग ऋषि ने उनकी सुन्दरता का वर्णन किया है कि उंगलियों में अंगूठियाँ, कौंधनी, नथ एवं बड़ी सुन्दर बेनी सजाकर बरसाने में आते हैं और वृषभानु भवन में पहुँचते हैं। चार दीवार हैं उस भवन में और वहाँ पर बहुत पहरा है, उन पहरों में नारी रूप में पहुँच जाते हैं। तो वहाँ क्या देखते हैं कि बड़ा सुन्दर भवन है और सखियाँ अद्भुत वीणा, मृदंग श्रीराधा रानी को सुना रही हैं, उनको रिझा रही हैं। दिव्य पुष्प हैं, लताएँ हैं, पक्षी हैं, जो श्रीराधा नाम का उच्चारण कर रहे हैं। राधा रानी उस समय टहल रहीं थीं। श्रीराधा रानी ने देखा कि एक बहुत सुन्दर गोपी आयी है। उस गोपी को देखकर वे मोहित हो जाती हैं और उसको अपने पास बैठा लेती हैं। राधा रानी गोपी का आलिङ्गन करती हैं और कहती हैं कि अरे ! तुम ब्रज में कब आई? हमने ऐसी सुन्दरी आज तक ब्रज में नहीं देखी, तुम जहाँ रहती हो, वह गाँव धन्य है, तुम हमारे पास नित्य आया करो। तुम्हारी आकृति तो श्रीकृष्ण से मिलती-जुलती है। श्रीजी पहचान नहीं पा रही हैं, बड़ी विचित्र लीला है। श्रीजी बोलीं – "न जाने क्यों, मेरा मोह तुम में बढ़ रहा है? तुम मेरे पास बैठ जाओ।" वह जब राधा रानी के पास बैठी तो बोली कि मेरा उत्तर की ओर निवास है (उत्तर में नन्दगाँव है) और हे राधे ! मेरा नाम है 'गोप देवी'। हे राधे ! मैंने तुम्हारे रूप की बड़ी प्रशंसा सुनी है कि तुम बड़ी सुन्दर हो। इसीलिए मैं तुम्हें देखने आ गयी। तुम्हारा ये वृषभानु भवन बड़ा सुन्दर है जो लवंग लता-वल्लरियों की सुवास से युक्त है। इसके बाद दोनों ने कन्दुक क्रीड़ा प्रारम्भ की, खेलते-खेलते संध्या हो चली। संध्या होने पर गोपदेवी कहती है कि अब मैं जाऊँगी और प्रातः काल पुनःआऊँगी। जैसे ही जाने का नाम लिया तो श्रीराधा रानी के नेत्र सजल हो उठे, बोलीं – "अरी सुन्दरी ! तू क्यों जा रही है?" पर गोपदेवी यह कह कर चली जाती है कि कल प्रातः काल आऊँगी। रात भर श्रीजी प्रतीक्षा करती रहीं। उधर नन्दनन्दन भी रात भर व्याकुल रहे। प्रातः काल फिर वे गोपदेवी का रूप बना कर आते हैं तो श्रीराधारानी बहुत प्रेम से मिलती हैं। राधा रानी बोलीं कि हे गोपदेवी ! तू आज उदास लग रही है। क्या कष्ट है? गोपदेवी बोली कि हाँ राधा रानी हमें बहुत कष्ट है और उस कष्ट को दूर करने वाला दुनिया में कोई नहीं है। राधा रानी बोलीं कि नहीं गोप देवी, तुम बताओ, इस ब्रह्माण्ड में भी अगर कोई तुमको कष्ट दे रहा होगा तो मैं अपनी शक्ति से उसको दण्ड दूँगी। गोपदेवी ने कहा कि राधे ! तुम मुझे सताने वाले को दण्ड नहीं दे सकती। राधा रानी बोलीं –"क्यों नहीं?" गोपदेवी – "मुझे मालूम है, तुम उसे दण्ड नहीं दे सकती हो।" श्रीजी बोलीं, "बताओ तो सही वह कौन है?" गोपदेवी – "अच्छा तो सुनो – मैं एक दिन साँकरी गली से आ रही थी। एक नन्द का लड़का है। उसकी पहचान बताती हूँ। उसके एक हाथ में वंशी और दूसरे में लकुटी रहती है। सहसा उसने मेरी कलाई को पकड़ लिया और मुझसे बोला कि मैं यहाँ का राजा हूँ, कर लेने वाला हूँ। जो भी यहाँ से निकलता है मुझे दान देता है। तुम मुझे दही का दान दो। मैंने कहा कि लम्पट, हट जा मेरे सामने से। मैं दान नहीं देती, ऐसा

कहने पर उस लम्पट ने मेरी मटकी उतार ली और मेरे देखते-देखते उस मटकी को फोड़ दिया, सारा दही पी गया, मेरी चूनरी उतार ली और फिर हँसता-हँसता चला गया।" यहाँ पर गोपदेवी ने कृष्ण की बड़ी निंदा की है कि वो जाति का ग्वाला है, काला कलूटा है, न रंग है, न रूप है, न धनवान है, न वीर है। हे राधे ! तुम मुझसे छिपाती क्यों हो? तुमने ऐसे पुरुष से प्रेम किया है ! ये ठीक नहीं किया। यदि तुम कल्याण चाहती हो तो उस धूर्त को, उस निर्मोही को अपने मन से निकाल दो। इतना सुनने के बाद श्रीराधा रानी बोलीं, "अरी गोप देवी, तेरा नाम गोपदेवी किसने रखा? तू जानती नहीं, ब्रह्मा, शिव भी श्रीकृष्ण की आराधना करते हैं।" यहाँ पर श्रीकृष्ण की भगवत्ता का राधा रानी ने बड़ा सुन्दर वर्णन किया है ! राधा रानी बोलीं कि जितने भी अवतार हैं – दत्तात्रेय जी, शुकदेव जी, कपिल भगवान्, आसुरि आदि ये सब भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना करते हैं और तू उनको काला-कलूटा ग्वाला कहती है ! उनके समान पवित्र कौन हो सकता है? गौरज की गंगा में जो नित्य नहाते हैं। उनसे पवित्र क्या कोई हो सकता है? क्या गौ से अधिक पवित्र करने वाली कोई वस्तु है संसार में? राधारानी बहुत बड़ी गौ भक्त हैं। यहाँ तक कि जब श्रीकृष्ण ने वृषभासुर को मारा था तो राधा रानी और सब गोपियों ने कहा था कि श्रीकृष्ण ! हम तुम्हारा स्पर्श नहीं करेंगी। तुमको गौ हत्या लग गई है, हम तुम्हें छू नहीं सकती। ऐसी गौ भक्त हैं राधा रानी। आगे राधा रानी कहती हैं गोपदेवी से कि तू उनकी बुराई कर रही है? वह नित्य गायों का नाम जपते हैं। दिन रात गायों का दर्शन करते हैं। मेरी समझ में जितनी भी जातियाँ होगीं, उनमें से सबसे बड़ी गोप जाति है। क्यों? क्योंकि ये गाय की सेवा करते हैं। इसलिए गोप वंश से श्रेष्ठ कोई नहीं हो सकता। गोपदेवी तू श्याम को काला-कलूटा बताती है, तो बता उस श्याम से भी कहीं अधिक सुन्दर कोई वस्तु है? स्वयं भगवान् नीलकंठ शिव भी उनके पीछे दिन-रात दौड़ते रहते हैं। राधा रानी बोलीं कि वे जटाजूट धारी, हलाहल विष को भी पीने वाले शक्तिधारी, सर्पों का आभूषण पहनने वाले, उस काले-कलूटे के लिए ब्रज में दौड़ते रहते हैं। तू उसे काला कलूटा कहती है? सारा ब्रह्माण्ड जिस लक्ष्मी जी के लिये तरसता है, वे लक्ष्मी जी उनके चरणों में जाने के लिये तपस्या करती हैं। तू उन्हें निर्धन कहती है? निर्धन ग्वाला कहती है? जिनके चरणों को लक्ष्मी तरस रही हैं, तू कहती है कि उनमें न बल है और न तेज है। बता? बकासुर, अरिष्टासुर, अघासुर, पूतना, आदि का वध एवं कालिय नाग को नाथने वाला क्या निर्बल है? कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों का एक मात्र सृष्टा और उनको तू बलहीन कहती है? सब जिनकी आराधना करते हैं, तू उन्हें निर्दय कहती है? वह अपने भक्तों के पीछे-पीछे घूमा करते हैं और कहते हैं कि भक्तों की चरण रज हमको मिल जाये और तू उनको निर्दय कहती है? जब ऐसी बातें सुनी तो गोपदेवी बोली, "राधे ! तुम्हारा अनुभव अलग है और हमारा अनुभव अलग है। ठीक है कालिया नाग को नाथा होगा इन्होंने लेकिन ये कौन सी सुशीलता थी कि मैं अकेली जा रही थी और मुझ अकेली की उन्होंने कलाई पकड़ ली। ये भी क्या कोई गुण हो सकता है?" गोपदेवी की बात सुनकर' राधा रानी बोलीं कि तू इतनी सुन्दर होकर के भी उनके प्रेम को नहीं समझ सकी? बड़ी अभागिन है। तेरा सौभाग्य था, पर अभागिन तूने उसको अनुचित समझ लिया, तुझसे ज्यादा अभागिन संसार में कोई नहीं होगी। गोपदेवी बोली – "तो मैं क्या करती? अपना सौभाग्य समझ के क्या अपना शील भंग करवाती?" श्रीराधा रानी बोलीं – "अरी ! सभी शीलों का सार, सभी धर्मो का सार तो श्रीकृष्ण ही हैं। तू उसे शील भंग समझती है?" बात बढ़ गई तो गोपदेवी बोली कि अगर तुम्हारे बुलाने से श्रीकृष्ण यहाँ आ जाते हैं तो मैं मान लूँगी कि तुम्हारा प्रेम सच्चा है और वो निर्दय नहीं है और यदि नहीं आये तो? राधा रानी बोलीं कि देख

मैं बुलाती हूँ और यदि नहीं आये तो मेरा सारा धन, भवन, शरीर तेरा। शर्त लग गई प्रेम की। इसके बाद श्रीजी बैठ जाती हैं, आसन लगाकर और मन में श्रीकृष्ण का आह्वान करने लग जाती हैं। बड़े प्रेम से बुलाती हैं। श्रीकृष्ण का एक-एक नाम लेकर बुलाती हैं –

श्यामेति सुंदरवरेति मनोहरेति
कंदर्पकोटिललितेति सुनागरेति।
सोत्कंठमह्नि गृणती मुहुराकुलाक्षी
सा राधिका मयि कदा नु भवेत्प्रसन्ना॥

(श्रीराधासुधानिधि - ३७)

"इस श्लोक का मतलब पूज्य श्री बाबा महाराज ने मुझे एक बार पंडित हरिश्चंद्र जी के शब्दों में समझाया था।"

पहले तो राधा रानी ने 'श्याम' कहा और उसके बाद तुरन्त बोलीं 'सुन्दर' ताकि कहीं कोई ऐसा नहीं समझ ले कि श्याम तो काला होता है, तो तुरन्त उसको सम्भाल लिया, फिर सोचा सुन्दर भी बहुत से होते हैं लेकिन सौत को सौत की सुन्दरता बुरी लगती है। अगर चित्त नहीं लुटा, अगर मन नहीं लुटा फिर सुन्दरता किस काम की तब उन्होंने तुरन्त कहा कि मन को हरण कर लेते हैं, मन तो गोद का एक बच्चा भी हर लेता है। बोलीं, "मन हरण करने का ढंग दूसरा है, बड़ा चतुर है।" फिर सोचने लगी सुन्दर हो, पर चतुर नहीं हुआ तो किस काम का? प्रेम में चतुरता तो चाहिये, नहीं तो भाव ही नहीं समझ पायेंगे। श्रीजी बोलीं, "भाव समझने वाला है!" इस तरह से श्रीकृष्ण का आह्वान कर रही थीं। गोपदेवी जो बैठी हुई थी, उसका शरीर कुछ काँपने लगा। जैसे ही प्रेम का आकर्षण बढ़ा तो श्रीकृष्ण समझ गये कि अब ये हमारा रूप छूटने वाला है। प्रेम में अद्भुत शक्ति होती है। श्रीकृष्ण के शरीर में रोमांच होने लग गया और बोले कि अब मैं सम्भाल नहीं सकता अपने आपको। उन्होंने देखा कि राधा रानी के नेत्रों में आँसू थे और वे मुख से श्रीकृष्ण का नाम ले रही थीं तुरन्त श्रीकृष्ण अपना रूप बदलकर "श्री राधे राधे" कहते आये। राधा रानी ने देखा कि श्रीकृष्ण खड़े हैं। श्याम सुन्दर ने कहा कि हे लाड़ली जी! आपने हमें बुलाया, इसलिये मैं आ गया, आप आज्ञा दीजिये, श्रीजी चारों ओर देखने लगीं। श्रीकृष्ण बोले, "आप किसको देख रही हैं। मैं तो सामने खड़ा हूँ।" बोलीं "मैं तुम्हें नहीं उस गोपदेवी को देख रही हूँ। कहाँ गयी?" श्रीकृष्ण बोले, "कौन थी? कोई जा तो रही थी, जब मैं आ रहा था।" राधा रानी ने सारी बात बताई तो बोले कि आप बहुत भोली हैं। अपने महल में ऐसी नागिनों को मत आने दिया करो। (ये प्रसंग गर्गसंहिता, वृन्दावन खण्ड में वर्णित है।)

जैसे ही मनुष्य भजन करता है वैसे ही उसकी आयु बढ़ती है। अकाल मृत्यु टल जाती है। लगभग १०० वर्ष की उम्र हर व्यक्ति को मिली है, लेकिन मनुष्य जो पाप या अपराध करता है चाहे वे इस जन्म के हों या पिछले जन्म के, वे उसको पहले ही मार डालते हैं। केवल भगवान् की भक्ति वाला अकाल मृत्यु से बच जाता है। भक्ति करो, अकाल मृत्यु से बचोगे, व्याधियों से बचोगे। श्रीमद्भागवत में यह बात कही गयी है –

शारीरा मानसा दिव्या वैयासे ये च मानुषाः।
भौतिकाश्च कथं क्लेशा बाधन्ते हरिसंश्रयम्॥

(भा. ३/२२/३७)

यह संसार माया है, इसको देखकर जो इसे सत्य मानता है, वह पशु है। माँ-बाप सब पशु हैं, बच्चा बड़ा हुआ तो सोचते हैं इसका विवाह हो, यह भोग भोगे, इसको रोटी-पानी मिल जाए, बस इससे आगे कुछ नहीं सोचते। कोई माँ-बाप नहीं सोचता कि हमारा बच्चा संसार रूपी कारागार से मुक्त हो जाए। इसलिए चाहे माँ-बाप हैं, वे पशु हैं –

लोकांश्च लोकानुगतान् पशूंश्च हित्वा श्रितास्तेचरणातपत्रम्।
परस्परंत्वद्गुणवादसीधुपीयूषनिर्यापितदेहधर्माः॥

(भा.३/२१/१७)

कर्दम जी बोले – इन पशुओं को छोड़ दो। सारा संसार छोड़ दो। ये सब तुमको संसार में फँसने का मार्ग बताएँगे।

ब्रजगोपिकाओं का कृष्ण-प्रेम

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'गोपी-गीत' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी मधुप्रिया जी, मानमन्दिर, बरसाना

श्रीशुकदेव प्रभु कहते हैं –

उवास कतिचिन्मासान् गोपीनां विनुदञ्छुचः ।
कृष्णलीलाकथां गायन् रमयामास गोकुलम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/४७/५४)

उद्धवजी महाराज कई मास तक ब्रज में रहे, उद्धव जी जब ब्रज आये तो वे कृष्ण कुण्ड पर ही स्नान करने गए थे क्योंकि ब्रज गोपियों ने प्रातःकाल नन्द भवन के द्वार पर सुवर्णमय रथ देखकर आपस में जानना चाहा कि यह रथ किसका है?

भगवत्युदिते सूर्ये नन्दद्वारि ब्रजौकसः ।
दृष्टवा रथं शातकौम्भं कस्यायमिति चाब्रुवन ॥

(श्रीमद्भागवतजी १०/४६/४७)

यह चर्चा करते हुए कृष्णकुण्ड की ओर गईं, जहाँ उद्धव आह्निक कर्म (स्नान आदि) कर चुके थे, वहीं से उद्धव- क्यार की ओर गोपियों का प्रस्थान होता है, जहाँ 'उद्धव- गोपी-संवाद' हुआ और प्रसिद्ध भ्रमरगीत गाया गया।

ब्रजभूमि में श्रीउद्धवजी महाराज को लगभग ४ महीने सहज में ही १ क्षण के समान व्यतीत हो चले, वसंत के प्रारम्भ में आये थे, ग्रीष्म समाप्त हो गया, पर मन नहीं करता यहाँ से जाने को क्योंकि मथुरा में कदाचित् श्रीकृष्ण दृष्टिपथ से अर्द्धक्षण के लिए इधर-उधर हो जायँ, पर यहाँ तो .. सब गोपिकाओं के साथ नित्य क्रीड़ा कर रहे हैं। ब्रजगोपियाँ ज्ञान सम्पन्न उद्धवजी को अपने प्रेष्ठ श्रीश्यामसुन्दर की लीला-स्थलियों का दर्शन कराती हैं, साथ ही वहाँ की लीला भी सुनाती हैं। श्रीसूरदासजी के शब्दों में –

इहां हरि जू बहु क्रीड़ा करी ।
सो तो चितते जात न टरी ॥
इहाँ पय पीवत बकी संहारी ।
शकट तृणावर्त इहां हरि मारी ॥
वत्सासुर को इहां निपात्यो ।
बका अघा इहाँ हरि जी घात्यो ॥
हलधर मारयो धेनुक को इहाँ ।
देखो ऊधो हत्यो प्रलम्ब जहाँ ॥
इहाँ ते ब्रह्म हमको गयो हरि ।
और किये हरि लगी न पलक घरि ॥
ते सब राखे संपति नरहरि ।
तब इहाँ ब्रह्मा आय अस्तुति करि ॥
इहाँ हरि काली उर्ग निकास्यो ।
लगेउ जरावन अनल सों नास्यो ॥
वस्त्र हमारे हरि जु इहां हरि ।
कहाँ लगी कहिए जे कौतुक करि ॥
हरि हलधर इहां भोजन किये ।
बिप्र तियन को अति सुख दिये ॥
इहँ गोवर्धन कर हरि धारयो ।
मेघ वारि ते हमे निवारयो ॥
शरद निशा में रास रच्यो इहां ।
सो सुख हमपै बरण्यो जात कहाँ ॥
वृषभ असुर को इहां संहारयो ।
भ्रुम अरु केशी इहां पछारयो ॥
इहां हरि खेलत आँख मुचाई ।
कहां लगि बरनैं हरि लीला गाई ॥
सुनि सुनि ऊधो प्रेम मगन-भयो ।
लोटत धर पर ज्ञान गरब गयो ॥
सुनि-सुनि ऊधो प्रेम मगन भयो ।
लोटत धर पर ज्ञान गरब गयो ॥
निरखत ब्रज भूमि अति सुख पावै ।
'सूर' प्रभु को पुनि पुनि गावै ॥

श्रीभागवतकार भी कहते हैं –

सरिद्वनगिरिद्रोणीर्वीक्षन् कुसुमितान् द्रुमान् ।
कृष्णं संस्मारयन् रेमे हरिदासो व्रजौकसाम् ॥

(श्रीमद्भागवतजी -१०/४७/५६)

श्रीउद्धवजी 'ब्रजगोपियों' के साथ प्रेम बावरे बनकर कभी तो श्रीयमुनाजी के किनारे पहुँचते हैं, वहाँ की माटी का अपने अंग-अंग में लेपन करते हैं, कभी वन-वनान्तर में घूमते-फिरते हैं, तो कभी गिरिराज की उच्च शिखर पर चढ़ जाते हैं। कभी श्रीकृष्ण से स्पृष्ट तरु के कोमल किसलय, पल्लवों, फलों की शोभा को देखने में ही खुद को भूल जाते हैं। इस प्रकार कृष्णलीला-स्थलियों को देखकर, ब्रजगोपिकाओं के प्रेम को

देखकर, श्रीउद्धव का ज्ञान तो मानो एक पोट में सिमटकर, गोपियों की उद्दाम गति से प्रवाहित कृष्णप्रेम नदी में बह गया। ब्रजलीला कभी बन्द नहीं हुई। चूंकि हरिवंश पुराणानुसार वसुदेवनन्दन ब्रज से गये, न कि नन्दनन्दन, अतः ब्रज में नित्य लीला होती थी, जिसका दर्शन गोपियों ने उद्धवजी को कराया –

सरिच्छैलवनोद्देशा गावो वेणुरवा इमे।
संकर्षणसहायेन कृष्णेनाचरिताः प्रभो॥

(श्रीमद्भागवतजी – १०/४७/४९)

एक प्रेम बावरी गोपी ने उद्धव का हाथ पकड़ा और बोली – "यही है वह नदी जिसमें श्रीकृष्ण विहार करते थे।" दूसरी गोपिका, दूसरी ओर ले जाती है, कहती है "यही वह पर्वत है, जिस पर चढ़कर श्यामसुन्दर बाँसुरी में मधुर तान छेड़ते थे और कभी-कभी तो मध्यरात्रि को ही न जाने क्या मन में आता, राग अलापने लगते, मानो हमें नाम ले-लेकर पुकार रहे हैं", एक भुजा पकड़कर, सलज्ज हो किञ्चित एकान्त वनप्रान्त में ले गयी, बोली – "और यह वह वन है उद्धव जी, जहाँ 'श्रीकृष्ण' हमारे साथ रासलीला करते थे और यह जो सामने कृष्ण-स्पृष्टा गायें खड़ी हैं, यह भी वे ही हैं जिन्हें कृष्ण के साथ प्रतिदिन सम्पूर्ण दिन बिताने का सौभाग्य मिला। उद्धव ! यह न समझ लेना कि यह लीलाएँ केवल हुई हैं, न..! न...!! न ...!!! –

पुनः पुनः स्मारयन्ति नन्दगोपसुतं बत।
श्रीनिकेतैस्तत्पदकैर्विस्मर्तुं नैव शक्नुमः॥

(श्रीमद्भागवतजी-१०/४७/५०)

वे तो हमारे सामने नित्य प्रकट हैं। हम उनसे यदि विलग हो जायें, तो जीवित ही न रह सकें।" इस नित्यलीला को सूरदासजी ने भी गाया है कि ब्रज में सदैव कृष्ण हैं। ब्रजलीला सर्वदा चलती रही, कभी भी बन्द न हुई और उस नित्यलीला का दर्शन कर, फिर स्वयं उद्धवजी ने भी इसे स्वीकार किया –

मैं ब्रजवासिन की बलिहारी।
जिनके संग सदा हैं क्रीडत श्री गोवर्धनधारी॥
किनहू के घर माखन चोरत किनहूं के संग दानी।
किनहूं के संग धेनु चरावत हरि की अकथ कहानी॥
किनहूं के संग यमुना के तट बंसी टेर सुनावत।
सूरदास बलि बलि चरनन की इह सुख मोहिं नित भावत॥

उद्धवजी महाराज ने गोपीपदरज की कामना तभी तो की है –

आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम्। या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम्॥

(श्रीमद्भागवतजी-१०/४७/६१)

"यह रज-कणिका कैसे मिले मुझ उद्धव को? यह सोच, थोड़ा मन को झटक देती है। मेरा परम सौभाग्य होगा, यदि यहाँ की पावन वसुंधरा में मुझे तृण, लता, गुल्म, वृक्ष, कंकड़, पत्थर कुछ भी बनने का अवसर मिल जाय और जब ये दूध-दधि विक्रय करने जायँ और मैं मार्ग के मध्य निश्चेष्ट हो पड़ जाऊँ, तो यह अपने कोमल चरणतल से मुझे एक ओर कर दें, बस आ ... हा ... हा ... ! मेरा एक जीवन तो क्या, जन्म-जन्मान्तर धन्य हो जाए। इन्होंने दुस्त्यज श्रृंखलाओं को छोड़, उस कृष्ण-चरणरज को प्राप्त किया है, जिसे ऋचायें भी अद्यावधि ढूँढ़ ही रही हैं किन्तु पा नहीं सकी।" ब्रजधरा में नित्य कृष्ण-सान्निध्य प्राप्त होने के कारण प्रतिदिन महामहोत्सव होते हैं। प्रतिदिन गोपियाँ अपने घर-द्वार स्वच्छ, सुसज्जित करती हैं, स्थान-स्थान पर कदली स्तम्भ खड़े करती हैं, सुन्दर-सुन्दर नूतन आकृति के फल-फूल से बंदनवार बनाकर लटकाती हैं, घर की ध्वजा को सजाती हैं। क्यों? "अरे ! नन्हा कृष्ण अभी गौचारण के लिए गया है, आता ही होगा।" दूसरी – "नहीं, नहीं ! उन्हें तो मैंने प्रभावती के घर दूध-दही चुराने में संलग्न देखा।" तीसरी – "तब तो मैं भी ताजा माखन निकाल कर सामने ही रख दूँ, यदि कन्हैया यहाँ आया और उसे....उसे कुछ नहीं मिला, तो मैं तो इस गौरस का स्पर्श भी नहीं करूँगी, वही वस्तु सफल है जो उनके लिए उपयुक्त है और उन्होंने स्वीकार कर ली है।" उद्धवजी इस नित्य लीला में स्थित गोपियों की प्रेम-पराकाष्ठा को देखकर चकित-विस्मित-थकित रह जाते हैं। इनको सिखाऊँ कि इनसे सीखूँ – दोनों में अपने को असमर्थ अनुभूत करते हैं।

आज से लगभग ७० वर्ष पूर्व पं. हरिश्चन्द्रजी महाराज, जो गहवरवन में एक साधारण कुटिया में रहते थे, वे परम रसिक पुष्टिमार्गीय महापुरुष रात्रि भर जागते थे, आपका उत्कट वैराग्यमय ऐकान्तिक जीवन श्रीजी में अनन्य निष्ठा से युक्त

था। आप सारी रात विप्रलम्भ (वियोग) की भावना में जागते रहते थे। कभी भी रात को सोये नहीं।

"**डासत ही गई बीत निसा, कबहूँ न नाथ नींद भर सोयो**"। तुलसीदासजी की विनय-पत्रिका की ये पंक्ति ही आपका जीवन थी। जो एक बार भी नींद भर नहीं सोया, वही यथार्थ प्रेमी है, यह स्थिति पं. हरिश्चन्द्र महाराजजी के जीवन में दृष्टिगोचर हुई। आप सारी रात जागते थे और खिड़की पर बैठकर गह्वरवन की कुंजों को देखा करते थे। एक बार आपके पास बहुत बड़े विद्वान काशी से आए। पं. हरिश्चन्द्रजी ने कहा कि कुछ कृष्ण-कथा सुनाइये। वह लगे बोलने कि उद्धवजी से ऐसा हुआ, गोपियों ने यह कहा, वह कहा, काफी देर बोलते रहे परन्तु पण्डितजी कुछ नहीं बोले। काशी से आए हुए महाराज बोले – "पण्डित जी ! आप तो कुछ बोले ही नहीं, कि हमने कैसा सुनाया यह वृत्तान्त।" पण्डितजी बोले कि हमारी समझ में तो एक ही बात आती है कि गोपियाँ भी कुछ बोली नहीं थी, वे जो कुछ बोलीं वह बोलना नहीं वस्तुतः प्रेमालाप था। भ्रमरगीत में आता है कि गोपियाँ क्या कह रही हैं, उन्हें स्वयं कुछ पता नहीं। गौड़ेश्वर सम्प्रदायाचार्यों का भी यही कथन है – भाव, प्रेम, मान, प्रणय, राग-अनुराग, महाभाव, मोहनाख्य, मादनाख्य भाव और चित्रजल्प, संजल्प, दिव्योन्माद आदि प्रेम की अवस्थाओं में स्वतः निकले हैं। वहाँ श्रीकृष्ण के प्रति असूया (दोषदृष्टि) है श्रीकृष्ण के प्रति ईर्ष्या है, उपहास है, व्यंग भी है। कहती हैं – गोप्युवाच –

मधुप कितवबन्धो मा स्पृशाङ्घ्रिं
सपत्न्याःकुचविलुलितमालाकुङ्कुमश्मश्रुभिर्नः।
वहतु मधुपतिस्तन्मानिनीनां प्रसादं यदुसदसि विडम्ब्यं
यस्य दूतस्त्वमीदृक् ॥ (श्रीमद्भागवतजी–१०/४७/१२)

भँवरे ! तू उस धूर्त का भाई है। कृष्ण को कितव कहती है। यह उनकी सहज बोलन है, जानबूझकर कुछ नहीं कहा गया। हमारे पाँव को मत छू, निर्लज्ज ! हमारी सौत कुब्जा आदि के वक्षस्थल पर जो माला है और वह माला वक्षस्थल से जब टकराती है तो स्तनों पर लगा कुमकुम उस पर लग जाता है, तू उस माला पर बैठता है तो तेरी मूछों में वो कुमकुम लग जाता है और उसी कुमकुम को लगाकर चरण छूने तू आया है। "चला जा, भाग जा !!" तेरा स्वामी भी निर्लज्ज है जो यदुवंशियों की सभा में जाता है और उन मानिनियों के वक्ष स्थल पर जो कुमकुम है उससे सनी माला को धारण करता है। यह परिहास की बात है कि जैसे तेरा स्वामी निर्लज्ज है वैसे ही तू भी है। चला जा। कृष्ण के प्रति असूया, दोषदृष्टि, व्यंग आदि क्या नहीं है उनका? गोपियाँ दिव्योन्माद की अवस्था में बोल रही थीं। उद्धव जी ने जो देखा उसका प्रभाव था, जो सुना उसका प्रभाव नहीं था। प्रेम में रंगी थीं मत्त थीं वे। जैसे कोई वारुणी पी ले तो होश नहीं रहता ...

प्रेमियों की स्थिति –

न जाने कौन सी धुन में तेरा दीवाना आता है।
उड़ाता खाक सर पे झूमता मस्ताना आता है॥
सुराही कहकहा उठी प्याला मुस्कुराता है।
हजारों उँगलियाँ उठती तेरा दीवाना जाता है॥

प्रेमियों की मस्ती अलग होती है –

मेरी जंजीरे पा से आवाज आती है।
हटो दीवाना आता है हटो दीवाना आता है॥

तो पं.हरिश्चन्द्र जी ने कहा कि गोपियों ने जो कहा वह उद्धव जी ने देखा, वह कृष्ण-वियोगमयी रहनी, एक विशेष कृष्णप्रेम की मस्ती ... उन ब्रजदेवियों को सुध-बुध ही नहीं है कि किस तरह से पड़ी हैं, कुछ पता नहीं है, न देह का, न वस्त्रों का। विशुद्ध प्रेम की मस्ती में ऐसा ही होता है। ब्रजभाव भावित संतजनों की भक्ति की सुगन्ध आज भी अमर है, जो जन-समुदाय के लिए परम कल्याणकारी है।

ऋषभ भगवान् ने कहा है कि जो संसार में फँसाता है उसे छोड़ दो; माँ को छोड़ दो, बाप को छोड़ दो, गुरु को छोड़ दो, अगर गुरु भी चन्दा-चिठ्ठे में फँसाता है, भवसागर से पार होने की शिक्षा नहीं देता तो उसे भी छोड़ दो –

गुरुर्न स स्यात्स्वजनो न स स्यात् पिता न स स्याज्जननी न सा स्यात्।
दैवं न तत्स्यान्न पतिश्च स स्यान्न मोचयेद्यः समुपेतमृत्युम्॥ (भा. ५/५/१८)

वह गुरु, गुरु नहीं है; वह स्वजन, स्वजन नहीं हैं; वह माँ, माँ नहीं है; वह पिता, पिता नहीं है; वह दैव, दैव नहीं है; वह पति, पति नहीं है; जो मृत्यु से छूटने का रास्ता नहीं बताता है। जो भगवान् की शरणागति न बतावे, उसको छोड़ दो; यह भगवान् की आज्ञा है।

परम सहिष्णु भक्त 'श्रीसदनकसाईजी'

श्रीबाबामहाराज एकादशी-सत्संग २१/०८/२०१४ से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी हेमा जी, मानमन्दिर, बरसाना

गतांक से आगे – सदन जी अपनी दुकान पर माँस बेचते थे | एक दिन एक संत इनकी दुकान के सामने से निकले | सदन ने उन्हें प्रणाम किया क्योंकि वह भजन करते थे | संत ने देखा कि लड़का तो बड़ा अच्छा है क्योंकि भजन कर रहा है | सदन ने संत से कहा – "महाराज ! मुझको भी कोई अच्छा रास्ता बताओ |" सदन की बात सुनकर संत वहीं रुके और उन्होंने अपने पास रखे शालिग्राम विग्रह की सेवा की | ठाकुर सेवा करते हुए सदनजी ने देखा तो उन्होंने संतजी से शालिग्राम जी को माँग लिया | सदन बोले – "महाराज, मुझे अपने ठाकुर जी दे दीजिये, मैं इनकी सेवा करूँगा |" पहले तो संतजी ने बहुत मना किया फिर जब सदन ने बहुत हठ किया कि मुझको तो भगवान् की सेवा करनी है, आप मुझे अपने ठाकुरजी नहीं देंगे तो मैं भोजन नहीं करूँगा तब संतजी ने अपने ठाकुरजी दे दिये और सदन जी अपने घर में शालिग्रामजी को लाए तथा उनको संतजी की ही तरह नहलाते-धुलाते थे, संत जी की तरह जो कुछ रूखा-सूखा मिलता, उन्हें भोग लगाते | भगवान् बच्चों पर बहुत प्रसन्न रहते हैं और उन्हें जल्दी मिल जाते हैं क्योंकि उनमे अहं नही होता है | एक दिन सदन शालिग्राम जी को छोड़ के दुकान पर जा रहे थे तो शालिग्राम जी बोले कि मुझको छोड़के क्यों जाता है, मुझे भी साथ ले चल | भगवान् प्रेम के आधीन हैं | सदन शालिग्रामजी को अपने साथ ले गये तो वे माँस की दुकान पर तौलने वाला बटखरा बन गये | शालिग्रामजी बोले- "आज से तू मुझसे माँस को तौला कर, तू जितना भी माँस तौलेगा मैं उसी के बराबर अपना वजन कर लूँगा | जिसको भी माँस तोलकर देगा तो मैं तेरे बटखरे का काम करूँगा, तराजू के एक पलड़े पर मुझको रख लिया कर और दूसरे पलड़े पर माँस रखा कर, जिसको जितना माँस चाहिए, मैं उतने वजन का हो जाया करूँगा | कोई ग्राहक आकर कहता कि पाव भर माँस दे दो तो सदन जी शालिग्रामजी रखकर तौल देते थे और वह माँस पाव भर ही निकलता था, किसी ने कहा कि मुझको एक किलो माँस दे दो तो शालिग्रामजी एक किलो बन जाते थे | इस तरह से कुछ दिन चलता रहा | एक दिन एक संत वहाँ से होकर गुजरे और उन्होंने देखा कि अरे ! ये माँस की दुकान पर शालिग्राम जी, ये तो गलत बात है | उन्होंने सदन जी से जाकर कहा कि तू तो पाप करता है | सदन ने पूछा – "कौन सा पाप महाराज ?" संत बोले – "शालिग्राम जी से तू माँस तौलता है, ये तो भगवान् हैं, इनसे गलत काम नहीं करना चाहिए | ला, ये शालिग्रामजी मुझको दे दे |" संत ने सदन से शालिग्राम जी को ले लिया और वह महात्मा की बात को टाल नही सके और उन्हें ठाकुरजी को दे दिया | शालिग्राम जी को ले गए संत भगवान् और उन्हें पंचामृत से स्नान कराया | संत शालिग्रामजी से बोले – "महाराज ! आप गन्दी जगह रहते थे, वह जगह अशुद्ध थी |" जब वह संत शालिग्रामजी को स्नान कराकर, भोग लगाकर सोए तो रात में ठाकुर जी ने उनसे स्वप्न में कहा – "अरे भाई ! तू मुझे वहीं सदन के पास पहुँचा दे, मुझे तो वहीं अच्छा लगता है, जल्दी पहुँचा |" संतजी सुबह उठे और जल्दी से शालिग्राम जी को सदन कसाई के पास ले गये और बोले – "अरे भैया ! वैसे तो यह पाप है लेकिन क्या करें, प्रभु की ऐसी ही इच्छा है, वे तेरे बिना नही रह सकते |" उन्होंने सदनजी को शालिग्राम जी दे दिया और वे हर समय कीर्तन करते, हर समय गाते रहते थे | भगवान् उनसे इसीलिए खुश हुए क्योंकि वह दुकान पर माँस भी तौलते किन्तु हर समय कीर्तन करते रहते थे –

गोविन्द हरे गोपाल हरे, जय-जय प्रभु दीनदयाल हरे |
घनश्याम हरे नन्दलाल हरे, जय-जय यशोदा के लाल हरे ||

इसीलिए भगवान् उनसे प्रसन्न रहते थे क्योंकि हर काम को करते-करते वह भजन करते थे | (श्री बाबा मान मन्दिर गुरुकुल के बच्चों से- तुम लोग भोजन करने जाते हो तो कीर्तन करते हो, आते हो तब भी कीर्तन करते हो | यही रास्ता है जीवन को सफल बनाने का |) एक दिन सदन जी के पास एक संत आए, वे जगन्नाथ पुरी जा रहे थे | वहाँ प्रति वर्ष रथयात्रा होती है | सदन जी ने संत से पूछा – "कहाँ जा रहे हो महाराज ?" वह बोले – "मैं जगन्नाथ भगवान् के दर्शन करने पुरी जा रहा हूँ |" सदन जी ने पूछा – "क्या मैं भी वहाँ जा सकता हूँ ?" संत बोले – "हाँ, तुम भी जा सकते हो, वहाँ कोई रुकावट नहीं है |" अब तो सदन जी अकेले ही चल पड़े | उस जमाने में गाड़ियाँ, मोटर आदि यातायात के साधन नहीं थे, अतः सदन जी पैदल जा रहे थे | अब ये जवान हो गए थे | जब ये पुरी जा रहे थे तो रास्ते में एक खेत मिला | उन्होंने सोचा कि शाम हो गई है, अतः आज रात यहीं रुक लेना चाहिए | वहाँ घर में किसान की एक युवा, सुंदर स्त्री थी | सदन जी को भूख लगी तो वह उसके पास गए और बोले – "माँ, रोटी दे दे |" वह स्त्री इनको देखके मोहित हो गई और बोली – "हाँ-हाँ, यहीं बैठकर भोजन कर लो |" सदन जी बैठ गए और उस स्त्री ने खीर आदि स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर इन्हें बढ़िया भोजन कराया क्योंकि उसका इनके प्रति गलत भाव था | भोजन कराने के बाद उस स्त्री ने इनसे कहा – "महाराज ! यहीं सो जाओ |" उसने दूर झोपड़ी में बिस्तर डाल दिया और ये सो गए (उस झोंपड़ी में उसका पति सोता था |) यह स्त्री कौन थी ? यह सदनजी के पूर्व जन्म की वही गाय थी जिसके लिए उन्होंने एक कसाई को हाथ के संकेत से बता दिया था कि वह उधर गई है और फिर कसाई ने उस गाय को पकड़ कर मार डाला था | अब वही गाय इस जन्म में स्त्री बनके यहाँ बदला लेने आई | सदनजी वहाँ सो गए और वह स्त्री रात को उनके पास आई तथा इनसे लिपटने लग गई | सदन जी बड़े भजनानन्दी थे, दिन-रात भजन करते थे, उन्होंने उस स्त्री के गलत आचरण पर उसे रोका, उससे कहा – "माँ, तेरा पति तो वहाँ है, उसके पास चली जा |" वह बोली – "नहीं, मैं तो तेरे पास सोऊँगी |" इन्होने कहा – "नहीं, ऐसा नही हो सकता है | तुम्हारा पति जीवित है, तुम उसको क्यों छोड़ती हो ?" वह स्त्री मानी नहीं और उसने सदन जी के साथ लेटने की कोशिश की किन्तु इन्होने उसे मना कर दिया और बोले - जब तेरा पति जीवित है तो तू मेरे पास क्यों आई है लेकिन ये तो पूर्व जन्म के कर्म थे, वह स्त्री गई और उसका पति जहाँ सो रहा था, एक धारदार हथियार से स्त्री ने उसका सिर काट दिया | यह वही कसाई था, जिसने गाय को काटा था और वही गाय अब स्त्री बनके उसका सिर काट रही है | सिर काटके वह स्त्री आई और सदन जी से लिपट गई तथा बोली – "देखो, अब तो मेरा पति जीवित नहीं है, मर गया है, अब तुम मुझसे सम्पर्क करो |" सदन जी घबड़ा गए और बोले कि मैं तो ऐसा नहीं कर सकता, गलत काम कभी नहीं करूँगा माता | अब तो उस स्त्री को बड़ा गुस्सा आया, वह सोचने लगी कि मैंने इसके लिए अपने पति का सिर काटा और फिर भी ये खुश नही हुआ, अब क्या होगा ? अब सबेरे लोग उठेंगे, मेरे पति की हत्या का समाचार सुनकर थोड़ी देर में हल्ला मचेगा और फिर लोग मेरे बारे में शंका करेंगे कि इस स्त्री ने अपने पति का सिर काटा | इसके बाद मुझे मृत्यु दंड की सजा दी जाएगी | अतः मौत की सजा से बचने के लिए उस स्त्री ने गाँव में हल्ला मचा दिया – "अरे बचाओ, बचाओ, बचाओ |" लोग दौड़ के गए और उससे पूछा – "क्या है ?" स्त्री बोली – "देखो, ये बदमाश मेरे साथ दुराचार करना चाहता था | मैंने कहा कि मैं विवाहित हूँ, मेरा तो पति है तो इसने जाकर मेरे पति का सिर काट दिया | अब मैं क्या करूँ ?" ऐसा कहकर वह रोने लग गई |

गाँव वालों ने सदन कसाई को पकड़ लिया जबकि उनकी कोई गलती नही थी, उनका कोई दोष नही था लेकिन लोगों ने सदन जी को पकड़ के उनके नाम रिपोर्ट कर दी कि ये हत्यारा है | मुकदमे की सुनवाई हुई, जज बैठा, उसने सदन जी से पूछा – "क्या नाम है तुम्हारा ?" वे बोले – "मेरा नाम सदन है |" जज ने कहा- "क्या तुमने इस स्त्री के पति को मारा ?" (अब देखिये इसको संत कहते हैं) सदन जी ने सोचा कि अगर मैं कहूँगा कि मैंने नहीं मारा तो लोग कहेंगे कि स्त्री ने अपने पति की हत्या की | इस बेचारी स्त्री ने मुझको खीर खवाई थी, मेरा सत्कार किया था तो यह मेरा धर्म है कि मैं इसको बचाऊँ | मुझे यदि फाँसी हो जावे तो कोई बात नहीं | भगवान् के नाम पर मरने में कोई नुक्सान नहीं है | विश्वास चाहिए, विश्वास से भगवान् मिलते हैं | जज ने सदनजी से फिर से पूछा- "क्या तुमने इस स्त्री के पति को मारा ?" इन्होंने कहा – "जी हाँ |" जज बड़ा बुद्धिमान था, उसने इनकी बात सुनके समझ लिया कि इसने नहीं मारा है, ये तो बड़ा अच्छा आदमी लगता है, इसकी बोली में मिठास है, यह हत्यारों की तरह कड़ाई से नहीं बोल रहा है | जज समझ गया कि इसकी गलती नहीं है, ये सब स्त्री चरित्र है लेकिन मजबूरी में उसको फैसला सुनाना पड़ा | जज बोला –"जाओ, तुम्हारे दोनों हाथ काट दिये जायेंगे |" जज की आज्ञा से सदनजी के दोनों हाथ काट दिये गए | हाथ से खून बह रहा है किन्तु वह चल पड़े जगन्नाथ पुरी की ओर क्योंकि वहाँ भगवान् का दर्शन करना है | कटे हाथों से खून बह रहा है लेकिन वह जा रहे हैं और कीर्तन कर रहे हैं – **"गोविन्द हरे गोपाल हरे जय-जय प्रभु दीनदयाल हरे |"** पिछली रात को उस स्त्री ने सदन जी के सामने एक गीत गाया था – **"आजा-आजा तू मेरे पास, मैं तेरी रानी हूँ |"** इन्होने उत्तर दिया – **"नहीं आऊँ मैं तेरे पास, तू नार बिरानी है |"** वह स्त्री गाती रही – **"रात रंगीली मैं भी रंगीली, तू रंग भरा रंगीला |"** लेकिन सदन जी के ऊपर उसके गाने का कोई असर नही पड़ा था क्योंकि हर समय वह कीर्तन करते थे | जिस समय वह गा रही थी, उस समय भी ये कीर्तन कर रहे थे | भगवान् का नाम मनुष्य को माया से बचाता है | देखो, आगे कीर्तन का चमत्कार होगा, ये कीर्तन करते जा रहे हैं और कटे हाथों से खून निकल रहा है | गोविन्द हरे गोपाल हरे जय-जय प्रभु दीनदयाल हरे | कीर्तन करते हुए धीरे-धीरे सदन जी जगन्नाथ जी के धाम में पहुँच गये | रास्ते में कुछ मिलता तो खा लेते थे | उनकी मृत्यु नहीं हुई, यह भगवान् की कृपा थी, नहीं तो दोनों हाथ कट जाने पर इतना अधिक खून निकलता है कि मृत्यु हो सकती थी लेकिन भगवान् की भक्ति के प्रभाव से सदन जी मरे नहीं | वह पैदल ही पुरी गये थे अतः वहाँ पहुँचने में इनको महीनों लग गये | उधर जगन्नाथजी ने मन्दिर के पुजारियों को स्वप्न में कहा कि मेरा एक भक्त आ रहा है, तुम लोग मेरी पालकी लेकर लाओ और उसको पालकी में बिठाकर यहाँ लाओ | प्रभु ने यह भी कहा कि उसकी पहचान यह है कि उसके दोनों हाथ कट चुके हैं और वह कीर्तन करते हुए आ रहा है | प्रभु की आज्ञा से भगवान् जगन्नाथ जी की पालकी लेके पुजारी लोग चले और रास्ते में सबसे पूछते जाते थे – "अरे भाई ! वह कौन है, जिसके लिए प्रभु ने पालकी भेजी है |" कोई कुछ नहीं बोलता था क्योंकि ऐसा कौन है जिसके लिए भगवान् पालकी भेजेंगे | सदनजी दूर से कीर्तन करते हुए आ रहे थे – **राधिका ऽ ऽ ऽ ! ! ! राधिका ऽ ऽ ऽ ! ! ! राधिका ऽ ऽ ऽ ! ! ! राधिका ऽ ऽ ऽ ! ! !** पुजारियों ने देखा कि एक आदमी आ रहा है, उसके दोनों हाथ कटे हैं और वह कीर्तन कर रहा है तो वे समझ गए कि यही है वह भक्त, जिसके लिए जगन्नाथ जी ने पालकी भेजी है | पुजारियों ने सदन जी को रोका और बोले- "अरे सुनो भाई !" सदन जी खड़े हो गए और बोले – "क्या है भइया ?" पुजारी लोग बोले – "यहाँ आकर इस पालकी में बैठो |" सदन जी बोले - "मैं तो पालकी में नहीं बैठूँगा, मैं हत्यारा

हूँ, मैंने पाप किया है |" पुजारी लोग बोले – "हम ये सब नहीं जानते, प्रभु की आज्ञा है, उन्होंने तुम्हारे लिए पालकी भेजी है |" सदन जी ने पालकी में बैठने से मना किया किन्तु पुजारी लोग तो खा-पी के मस्त रहते हैं, उन्होंने सदन जी को पकड़ के पालकी पर बैठा दिया और बोले – "कैसे नही बैठेगा |" अब बेचारे सदनजी क्या करते ? जब सदनजी मन्दिर पहुँचे तो वहाँ उन्होंने जगन्नाथ जी के दर्शन किए और लेटकर प्रभु को साष्टांग दंडवत करने लग गए | साष्टांग दंडवत में हाथ आगे रहते हैं– **"पदाभ्यां कराभ्यां जानुभ्यां दोर्भ्यां च मंगलं दिवा | मनसा वचसा दृष्ट्या प्रणामो अष्टांग इतीर्तितः ||"** दोनों हाथ, दोनों पाँव, दोनों घुटने तथा वाणी और आँख, आठ अंग एक साथ भगवान् के आगे झुकते हैं | अब सदनजी के हाथ तो कट चुके थे, ऐसे में वह अष्टांग प्रणाम कैसे करते अतः उन्होंने केवल मन से सोचा कि हम हाथ से भगवान् को प्रणाम कर रहे हैं | इतना सोचना ही था कि दोनों हाथ जो कट चुके थे, भगवान् की असीम कृपा से फिर से निकल आये | अब तो बड़ा चमत्कार हुआ मन्दिर में, सब लोग समझ गए कि ये सिद्ध भक्त हैं | इसके बाद बड़े सम्मान के साथ उन्हें जगन्नाथजी का प्रसाद दिया गया और फिर वे जगन्नाथजी के मन्दिर में ही रुक गए | अब तो लोग उनके दर्शन करने के लिए मन्दिर में आने लगे कि अरे भाई कौन है सदन, जिसके कटे हुए हाथ फिर से निकल आये परन्तु सच्चा भक्त वही होता है, जो मान-सम्मान नहीं चाहता है और हम लोग मान-सम्मान चाहते हैं इसलिए भक्त नही हैं | हम सभी लोग भक्त नही हैं क्योंकि मान-सम्मान से प्रेम रखते हैं, सच्चे भक्त मान-सम्मान से प्रेम नहीं रखते जैसे मीराजी, तुलसीदासजी, कबीरदासजी | अपनी मान-प्रतिष्ठा बढ़ते देखकर सदनजी ने पुजारी जी से कहा- "भाई, मुझको अब जगन्नाथ पुरी में नहीं रहना है क्योंकि यहाँ बहुत से लोग आ करके मेरा सम्मान कर रहे हैं | मान-सम्मान से मैं घबराता हूँ |" ये पुरी से चलने के लिए उठे, पुजारीजी ने रोका और कहा कि तुम यहीं रहो, जगन्नाथजी की ऐसी ही आज्ञा है लेकिन एक दिन सदनजी रात में उठे और चुपचाप वहाँ से चले गए | उन्होंने जगन्नाथ धाम छोड़ दिया यह सोचकर कि अब एकांत में भगवान् को बुलाऊँगा क्योंकि एकांत में ही ठीक से भजन होता है | इस प्रकार कीर्तन करते हुए सदनजी पुरी से चले गये |

यही करुणा करना करुणामयि मम अंत होय बरसाने में,
पावन गहवरवन कुञ्ज निकट रज में रज होय मिलूं ब्रज में |

जिस क्षण यह प्राण निकलने लगे, यह जीवन हाथों से जाने लगे
उस क्षण कुछ भी नहीं याद रहे, बस ध्यान रहे श्री चरणों में |
जिन पद की सेवा हरि करते, निज कर से नित जावक धरते ,
यदि उन चरणों की याद रही (तो) फिर क्या भय है मर जाने में |
विकराल काल को देखूँगा, अति मृत्यु कष्ट को झेलूँगा ,
मर के भी दर नहीं छोडूंगा, विश्वास यही मेरे मन में | (-पूज्य श्री बाबा महाराज कृत)

भागवतधर्म की प्रेरिका 'श्रीगीताजी'

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'श्रीमद्भगवद्गीताजी के अध्याय-२' से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका दीदीजी गुरुकुल की छात्रा बाल साध्वी प्रतीक्षा जी, मानमन्दिर, बरसाना

श्लोक – ३२

यदृच्छया चोपपन्नां स्वर्गद्वारमपावृतम् ।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥

हे पार्थ ! दैव की इच्छा से प्राप्त हुए और स्वर्ग के खुले द्वार रूप इस प्रकार के युद्ध को पुण्यशाली क्षत्रिय ही पाते हैं | भगवान् कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि दैव इच्छा से तुम्हें युद्ध का अवसर प्राप्त हुआ है | स्वर्ग का द्वार तुम्हारे लिए खुल गया है क्योंकि जीवित रहोगे तब भी तुम्हारे लिए स्वर्ग-प्राप्ति निश्चित है और मृत्यु के उपरान्त तो स्वर्ग की प्राप्ति अवश्यम्भावी है | धर्म के लिए जीना भी उत्तम है और मरना भी उत्तम है | धर्म के लिए जो मरता है, वह स्वर्ग जाता है और धर्म की रक्षा हेतु जो जीता है, वह भी स्वर्ग है | इसलिए भगवान् ने अर्जुन से कहा कि तुम्हारे लिए स्वर्ग का द्वार खुल गया है | ऐसा युद्ध भाग्य से मिलता है, मृत्यु का ऐसा अवसर भाग्य से मिलता है | इसीलिए पुरातनकाल के क्षत्रिय अत्यधिक वीर होते थे | जब वे युद्धभूमि में जाते थे तो उनकी स्त्रियाँ तिलक करती थीं इस विश्वास के साथ कि युद्ध में वीरगति को प्राप्तकर हमारा पति स्वर्ग को जाएगा | माताएँ पुत्र को प्रसन्नता से तिलक करके विदा करती थीं कि यदि यह जीवित रहेगा तब भी स्वर्ग जायेगा यदि इसकी युद्ध में मृत्यु होती है तब भी स्वर्ग जाएगा | इसीलिए भारतवर्ष में क्षत्रिय-जाति अत्यधिक वीर मानी गई है, उसके जीवन और मरण दोनों से स्वर्ग-प्राप्ति जुड़ी हुई है | इन श्लोकों में ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि क्षत्रिय वह नहीं है जो स्वयं शराब पीता है और दूसरों को शराब पीना सिखाता है, शराब की पार्टी का आयोजन करता है, ऐसा नामधारी क्षत्रिय तो महापापी है क्योंकि पाँच महापापों में एक है 'मदिरापान' | जो शराब की पार्टी आयोजित करता है, वह लोगों को अधर्म में लगाता है अतः वह महापापी है, वह क्षत्रिय नहीं है, वह पाप करता और कराता है; विवाह आदि अवसरों पर शराब पीना और पिलाना बहुत बुरी कुरीति है; जो लोग सत्संग करते हैं, उनको इस कुरीति से बहुत दूर रहना चाहिए | चाहे समाज में गाली मिले, अपमान हो किन्तु अधर्म के रास्ते पर कभी नहीं चलना चाहिए | जो अधर्म से रक्षा करता है, वह क्षत्रिय है | यदि हम समाज और व्यक्ति की अधर्म से रक्षा नहीं कर सकते तो उसे अधर्म क्यों सिखाएँ ? शराब की दावत जहाँ कहीं भी होती हो, वहाँ कभी नहीं जाना चाहिए, ऐसे लोगों के साथ कभी बैठना नहीं चाहिए, उनका मुख नहीं देखना चाहिए | उपरोक्त दो श्लोक स्पष्टतया निरूपित करते हैं कि क्षत्रिय का धर्म क्या है ? भगवान् अर्जुन से कहते हैं कि तुम धर्मयुद्ध से हट रहे हो अर्थात् अपने धर्म से हट रहे हो जबकि तुम्हारा धर्म है - अधर्म से समाज को बचाना, धर्म के लिए लड़ना | धर्म के लिए युद्ध करते हुए यदि तुम मृत्यु को प्राप्त हो जाओगे तब भी तुम्हारा कल्याण है | इसलिए यदि तुम युद्ध से हटते हो तो अपना धर्म-त्याग करते हो | कुछ वर्षों पहले रूस में गीता पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था यह कहकर कि 'गीता' व्यर्थ का ग्रन्थ है क्योंकि इसमें लड़ने-झगड़ने की शिक्षा दी गयी है, ऐसे श्लोकों के कारण रूस में गीता को प्रतिबंधित कर दिया गया था | जब सम्पूर्ण दुनिया में रूस के इस कदम का विरोध किया गया तो वहाँ की सरकार को हार माननी पड़ी और गीता पर से प्रतिबन्ध को हटाना पड़ा | वस्तुतः गीता लड़ाई नहीं सिखाती अपितु स्वधर्म-पालन सिखाती है |

भक्तिहीन मानव-देह पशुवत् है। जैसे – गधे, कुत्ते शरीर धारण करते हैं, उनका जीवन केवल भोगमय होता है। तुमको इसलिए मनुष्य बनाया गया है कि अमृत पियो, अमृत क्या है? भगवान् का गुणगान। अगर कहो कि क्या खायेंगे, क्या पियेंगे, यदि दिन-रात भजन करेंगे? अरे तुम जानते नहीं हो, जिसने भक्ति रूपी अमृत पी लिया तो उसके देह-धर्म का निर्वाह अपने-आप होगा। *'प्रणत कुटुंब पाल रघुराई।'* भगवान् 'शरणागत जनों' का पालन-पोषण करते हैं।

असाध्य रोगनाशक 'गौसेवा-व्रत'

श्रीबाबामहाराज के सत्संग 'गौ-महिमा' (२६/८/२०१२) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका दीदीजी गुरुकुल की छात्रा बाल साध्वी रासप्रिया जी, मानमन्दिर, बरसाना

इस संसार में सब कुछ, लोक-परलोक प्राप्त करने का साधन 'गौ-सेवा' है | सांसारिक कामनायें जैसे- 'धन-सम्पति, मान-सम्मान, राज्य' ये सब तो छोटी चीजें हैं; गौ-सेवा से भगवान् की प्राप्ति भी हो सकती है |

"विष्णोः प्रसादो गोश्चापि .....|"

राजा ऋतम्भर ने कहा कि हे महाराज ! गौ-सेवा कैसे की जाए? उन्होंने कहा कि गाय को जौ खिला दो, जब वह गोबर करेगी तो जौ निकल आएगा, उस जौ को इकट्ठा करके, उसी का भोजन करो, ये 'गौसेवा-व्रत' है | जब गाय चरकर जल पी ले, तब तुम जल पीओ और रात को भी मच्छर इत्यादि गाय को न सतावें, इस पर ध्यान दो और रात को भी दोनों स्त्री-पुरुष क्रम-क्रम से जागकर उसकी रक्षा करो, इस सेवा से सब रोग नष्ट हो जाएगा | इस सेवा का अनुभव दो साल पहले हमने देखा है – एक महात्मा थे – नित्यानन्दजी, वे अक्सर बीमार रहते थे, उनको किसी ने कहा कि आप ये व्रत (गौसेवा-व्रत) कीजिये; उन्होंने ये व्रत किया था कई महीने तक और उनके सब रोग चले गए थे जो असम्भव-से थे | बहुत दिन तक वे महात्माजी जिये | अतः कथनाशय है कि ये बात केवल पुस्तकों की ही नहीं है, अनुभव की है | असाध्य कोई रोग है, वह भी इस व्रत से दूर हो जाता है क्योंकि इससे पाप जल जाते हैं | पाप ही रोग बनता है | मनुष्य को आपत्तियाँ, बीमारियाँ, अनेक तरह के संकट (मुसीबत) इत्यादि पिछले पापों से आते हैं | 'गौसेवा-व्रत' एक ऐसा व्रत है जो पापों को नष्ट कर देता है, जो रोग के मूल हैं | ऋतम्भरजी ने गौसेवा-व्रत लिया, वे गाय को जौ खिलाते थे और जौ गोबर में निकलता था, उसको बीन लेते थे और उबालकर खा लेते थे | (गोबर से निकले हुए जौ की रोटी या दलिया भी बना सकते हैं |) ऋतम्भरजी राजा थे, जंगल में गाय चराते थे, जब संध्या को घर लौटते थे तो उनकी पत्नी आरती करती थी और रात भर दोनों जागते थे क्रम-क्रम से | एक दिन की बात है, जंगल में एक सिंह आया और ऋतम्भरजी जंगल की शोभा देख रहे थे, सिंह ने गाय को दबा लिया, गाय चिल्लाने लग गई, सिंह ने गाय को मार दिया, उन्होंने सोचा कि मुझे गौहत्या लग गई है, इसलिए वे जाबाली ऋषि के पास गये जिन्होंने ये गौसेवा सिखाई थी और वहाँ जाकर राजा रोने लग गए और कहा कि हे ऋषिवर ! हम धर्म करने गये, उल्टे पाप लग गया तो इस पाप से हम कैसे छूटें –

द्योर्वैनिष्कृतिर्नास्ति पापपुञ्जकृतोस्तयोः |
गत्या गौवध कर्तुश्च नराज्ञा विनिन्दतु ||(पद्मपुराण)

गौ-हत्या का हमें कोई प्रायश्चित बताइए क्योंकि मैं वन की शोभा देख रहा था और गाय मारी गई तो दोष मेरा ही है |

(ये गौशाला वालों के लिए बहुत अच्छी कथा है, क्योंकि गौसेवा में अपराध होते-रहते हैं |)

जाबाली ऋषि ने ऋतम्भरजी से कहा –

भज श्रीरघुनाथं त्वं कर्मणामनसागिरा |
नैष्कपट्येन लोकैशं भूयश्च महामते ||

"हे राजन् ! भगवान् की भक्ति ही सभी पापों को नष्ट करती है, गौहत्या तुमको लग गई है तो भगवान् की भक्ति करो |"

ये बात श्रीमद्भागवतजी में भी लिखी है –

ब्रह्महा पितृहा गोघ्नो मातृहाऽऽचार्यहाघवान् |
श्वादः पुल्कसको वापि शुद्ध्येरन् यस्य कीर्तनात् ||

(श्रीमद्भागवतजी ६/१३/८)

मातृ-हत्या, पितृ-हत्या, आचार्य-हत्या आदि बड़े-बड़े पाप भगवान् के कीर्तन से नष्ट हो जाते हैं | निष्कपट भाव से भगवान् की सेवा करो | राजा ऋतम्भर ने निष्कपट भाव से भगवान् की सेवा की, उससे हत्या तो मिट ही गई और एक सत्यवान नाम का भक्त पुत्र उत्पन्न हुआ, जबकि उनके भाग्य में पुत्र नहीं था | असंभव काम भी गौ-सेवा से सहज सम्भव हो जाते हैं; ये बात पद्मपुराण की कथा से सिद्ध हो जाती है |

राम-कृष्ण ने जिनकी वंदना की उस गौमाता की सेवा ही सच्ची राष्ट्र सेवा व सच्ची भगवदाराधना है। यह भगवद् संपदा (गौ) पृथ्वी के लिए वर व भारतीय संस्कृति का मेरुदण्ड है। परम कल्याणकारी है - गौसेवा। श्रीवशिष्ठजी की गौसेवा बड़ी ख्यात है, इनको गौ-तत्ववेत्ताओं का आद्याचार्य कहा गया है, महाभारत में राजा सौदास को आपने गौसेवा धर्म का उपदेश दिया, गौओं का नाम कीर्तन किए बिना न सोए और उनका स्मरण करके ही प्रातः उठे।

नाकीर्तयित्वा गाः सुप्यात् तासां संस्मृत्य चोत्पतेत्।
सायंप्रातर्नमस्येच्च गास्ततः पुष्टिमाप्नुयात्॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व ७८/१६)

गाश्च संकीर्तयेन्नित्यं नावमन्यते तास्तथा।
अनिष्टं स्वप्नमालक्ष्य गां नरः सम्प्रकीर्तयेत्॥

(महाभारत, अनुशासनपर्व ७८/१८)

जिन श्रीवेदव्यासजी का उच्छिष्ट है सम्पूर्ण वैदिक साहित्य "**व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वम्**" आपने भी अपने समग्र साहित्य में गौसेवा को ही प्रमुख माना, चाहे वह स्कन्द पुराण हो, भविष्य पुराण हो, पद्म पुराण हो, अग्नि पुराण अथवा महाभारत हो सर्वत्र गौ-गरिमा का ही वर्णन है। च्यवन ऋषि ने तो राजा द्वारा एक गाय दिए जाने पर कहा – "**महाराज ! आपने मुझे खरीद लिया।**" महाराज ऋतम्भर ने अपूर्व गौसेवा की | जाबाल पुत्र सत्यकाम को गौसेवा से ही ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति हुई | महाराज दिलीप ने गौभक्ति से रघु जैसे परम यशस्वी पुत्र को प्राप्त किया, जिससे वंश का नाम ही रघुवंश हो गया | नामदेव ने मृत गाय को जीवित किया; कैसा विलक्षण था इन संत-महापुरुषों का गौ-प्रेम। कलिकाल में भी वीर बालक शिवाजी तो शैशव से ही गौभक्त थे, गौवंश पर होने वाले अत्याचार को नहीं देख सकते थे। गौप्राणरक्षणार्थ अनेकों बार अकेले कसाईयों से भिड़ गए और गौवधिकों का वध भी कर डाला, ऐसे गौ-प्रेमी भक्तजनों को बारम्बार नमन है।आर्थिक व धार्मिक समृद्धि का आधार स्रोत है – गाय। देश की लगभग ८०% जनता कृषि जीवी है, वह कृषि पूर्णरूपेण गौ पर अवलंबित है। गोमय से बढ़ती है पृथ्वी की उर्वरा शक्ति। गोबर की खाद से उत्पन्न अन्न से न केवल शरीर अपितु मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ भी शुद्ध, स्वच्छ व शक्तिसंपन्न होती हैं –

"अन्नशुद्धौ सत्वशुद्धि, सत्वशुद्धौ ध्रुवास्मृति.... "

आज भी गौवंश की उपेक्षा न करके उसी से कृषि कार्य सम्पादित हो तो न गौवध हो, न जनवध। आज की मँहगाई ने जनवध कर दिया। डीजल, पेट्रोल की आए दिन मँहगाई वृद्धिरत है, क्या आवश्यकता है डीजल, पेट्रोल की? गोबर गैस से सब कार्य क्यों न किये जायें? गोबर गैस से चलित वाहन आज तेजी से हो रहे वायु प्रदूषण पर भी रोक लगायेगा किन्तु देशद्रोहियों को बताने पर भी न अपना लाभ दिखाई देता है न देश का ! हमारी भूमि का अधिकांश भाग बंजर दिख रहा है, उससे शनैः-शनैः ऐसी स्थिति आ जाएगी कि प्रजा अन्न-दाने के लिए तरस जाएगी, चारों और दुर्भिक्ष ही दुर्भिक्ष होगा। विशुद्ध भाव से हमें गौसेवा करनी चाहिए। इसके निमित्त प्राप्त धन का दुरूपयोग हमें नारकीयता में ले जायेगा। गाय जब अपने दूध से अपना स्वार्थ नहीं रखती तो हम गौ सेवा के धन से अपनी स्वार्थ पूर्ति करें यह उचित नहीं। **"गावो विश्वस्य मातरः"** गाय किसी व्यक्ति विशेष की नहीं सम्पूर्ण विश्व की माँ है अतः सम्पूर्ण राष्ट्र का परम धर्म है गौ वध निवारण व गौ सेवा। कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र के २/२६ में गौरक्षा पर राजा को पूर्ण रूपेण ध्यान देने का निर्देश किया है। अशोक के शिला लेखों में गौहत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध द्रष्टव्य है।**"गावो विश्वस्य मातरः"** वेदों में गाय को सारे संसार की माता कहा गया। जन्म देने वाली माँ सदा पोषण नहीं कर सकती है केवल अपने से उत्पन्न शिशु का पालन थोड़े दिन कर सकती है किन्तु गौ माता संसार के सभी प्राणियों का पोषण करती है। अपनी माता बच्चे से सेवा का भी स्वार्थ रखती है जबकि गौमाता निःस्वार्थ भाव से दूध दान करती है। ऐसी संसार की जननी गौ माता को मारना अपनी सैकड़ों जननियों से ज्यादा घृणित है मातृभक्ति की दृष्टि से ही नहीं कृतज्ञता की दृष्टि से भी गौ हत्या करना पाप है।

जब तक संस्कार रहते हैं, तब तक वह विषयों में जाएगा। संस्कार क्या है? संस्कार पिता है, उसकी बेटी है वासना और वासना की बेटी है स्मृति। संस्कार ही वासना पैदा करता है और वासना से स्मृति आती है और स्मृति से वैसी प्रवृत्ति पैदा हो जाती है – राग-द्वेषमयी।

विशुद्ध बोध प्रदायिनी 'श्रीभागवतजी'

श्रीबाबामहाराज द्वारा किए गए श्रीमद्भागवतजी के अध्यापन (२०/२/२०२०) से संग्रहीत

संकलनकर्त्री एवं लेखिका दीदीजी गुरुकुल की छात्रा बाल साध्वी लक्ष्मी जी, मानमन्दिर, बरसाना

श्रीबाबामहाराज के शब्दों में श्रीभागवतजी के श्लोकों की व्याख्या –

(श्लोक १/१/१)

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरतश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्
तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये मुह्यन्ति यत्सूरयः ।
तेजोवारिमृदां यथा विनिमयो यत्र त्रिसर्गोऽमृषा
धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकं सत्यं परं धीमहि ॥

(श्रीमद्भागवतजी १/१/१)

'जन्माद्य' – जन्म आदि, 'आदि' माने तीन स्थितियाँ होती हैं – जन्म, पालन और विनाश | 'अस्य' - इस संसार का, यतः - जहाँ से, ('यत्' शब्द से तसिल प्रत्यय हुआ तो 'यतः' बन गया |) यतः – जहाँ से, इतरतः – व्यतिरेक, 'अन्वय' - सीधे हिसाब से, व्यतिरेक - उल्टे हिसाब से, जैसे – '१,२,३,४,५,६,७,८,९,१०' ये अन्वय है, इसका उल्टा किया तो '१०,९,८,७,६,५,४,३,२,१' - यह व्यतिरेक हो गया | अन्वय और इतर (व्यतिरेक) से, सीधे या उल्टे, जिससे होता है जन्म आदि, 'अर्थेषु' समस्त पदार्थों में, 'अर्थेषु अभिज्ञः' इसमें 'यण संधि' हुई है | 'जन्मादि अस्य' – 'जन्मादि' अर्थात् जन्म, पालन और मृत्यु (विनाश), तीन अवस्थायें होती हैं – 'संसार को बनाना, पालन करना और संहार करना |' सीधे और उल्टे दोनों तरह से संसार का जन्म, संसार का पालन, संसार का विनाश | 'अभिज्ञ' - जो सर्वज्ञ है, ज्ञाता है | जड़ चीजों में भी जो ज्ञाता है, उसको अभिज्ञ कहते हैं | 'स्वराट्' - जो अपने आप अपनी सत्ता से प्रकाशित होता है, उसे स्वराट् कहते हैं | हम लोग दूसरे की सत्ता से प्रकाशित होते हैं, स्वराट् नहीं हैं | स्वराट् भगवान् है | 'तेने' - इस भगवान् ने संसार को फैलाया, 'ब्रह्म' - वेद | वेद बनाया, फैलाया; कैसे? 'हृदा' – हृदय से, संकल्प से यानि उसको किसी ने नहीं पढ़ाया | य - जो, आदिकवये- ब्रह्मा, सबसे पहले सृष्टि में भगवान् ने ब्रह्माजी को ज्ञान दिया था | मुह्यन्ति - मोह को प्राप्त हो जाते हैं | यत् - जिनको, सूरयः – बड़े-बड़े विद्वान् लोग, 'तेज –अग्नि, वारि - पानी, मृद – पृथ्वी' ये तीन तत्व हैं | इन तीनों का 'यथा विनिमयो' विनिमय हो जाता है, कैसे होता है ? पानी में पृथ्वी दिखाई पड़ेगी, जैसे पानी में मिट्टी दिखाई पड़ती है | मिट्टी का शीशा बनता है और शीशे में सब चीजें दिखाई पड़ती हैं | तेज, वारि और मिट्टी में जैसे विनिमय, अदला-बदली हो जाती है | शीशे में देख लिया मिट्टी है और तेज में देख लिया; इन तीनों की अदला-बदली होती है | यत्र- जहाँ, 'त्रिसर्ग' तीनों प्रकार की सृष्टि, 'सर्ग' सृष्टि | तीन प्रकार की सृष्टि है - जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति | ये तीनों प्रकार की सृष्टि अमृषा है | 'अमृषा' सत्य अर्थात् तीनों प्रकार की सृष्टि सच दिखाई पड़ती है जबकि सारा संसार झूठा है | वे भगवान् 'धाम्ना स्वेन सदा निरस्तकुहकम्' 'धाम' - तेज, उनके निवास का स्थान, इस प्रकार धाम के कई अर्थ होते हैं | स्वेन - अपने, निरस्त- नष्ट किया या पराजित किया है, कुहक – कपट या माया, भगवान् अपने तेज से सदा माया को नष्ट करते रहते हैं | वे भगवान् कैसे हैं ? 'सत्यं परं धीमहि'- परम सत्य हैं, उनका हम लोग ध्यान करते हैं |

बहुत से लोग घर से चलते हैं भजन करने के लिए और थोड़े ही दिन में उनका ज्ञान-वैराग्य आदि सब नष्ट हो जाता है। फिर वह सांसारिक आसक्ति, धन, भोग आदि में डूब जाते हैं। हजारों लोगों के बीच में भाषण करने वाले प्रख्यात कथावाचक ऐसे संग्रही बन जाते हैं कि जितना गृहस्थ भी नहीं बन सकता; इसका कारण यही है कि जीव को अनादिकाल से विषयों का अभ्यास है, माया का अभ्यास है और उसके संस्कार चित्त पर जमा हैं।

व्यासाचार्या श्रीमुरलिकाजी द्वारा कथित 'श्रीमद्भागवत-कथा'(९/१/२०१४)

संकलनकर्त्री एवं लेखिका साध्वी नवीनाश्री जी, मानमन्दिर, बरसाना

दो-दो, तीन-तीन बार हमलोग भोजन करते हैं (ऐसा नहीं कि आज खा लिया तो पचास साल तक भूख नहीं लगेगी), फिर भी इस शरीर की कभी पूर्ति होती नहीं है और इस नश्वर देह की अंतिम संज्ञा भी क्या है ? ये कृमि, विड, भस्म बन जायेगा और कुछ देगा नहीं और कुछ इससे मिलेगा नहीं कि उदर पोषण से कोई भगवान् मिलते हों तो फिर इस अस्थिर शरीर से क्या स्थिर भगवान् की प्राप्ति नहीं की जा सकती है | बोले-

साधन धाम मोच्छ कर द्वारा । पाइ न जेहिं परलोक सँवारा ॥

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड - ४३)

इस अस्थिर शरीर से हम नित्य स्थिर शरीर (भक्तिमय दिव्य वपु) की प्राप्ति कर सकते हैं, फिर भी हम मूढ़ लोग नहीं करते हैं, भगवत्प्राप्ति की चेष्टा नहीं करते हैं | हर आदमी सदा रहना चाहता है, कोई मरना ही नहीं चाहता | हमलोग विचार करें कि जिस अन्न से हम पेट भर रहे हैं; वह अन्न जब सुबह बनाया और संध्या तक जब बिगड़ जाता है, जिस अन्न से हम अपने आपको पुष्ट कर रहे हैं, वह अन्न ही जब नित्य नहीं है तो उस अनित्य अन्न को खाने से यह शरीर नित्य कैसे हो जाएगा? नित्य नहीं हो सकता है | अनित्य भोजन कर रहे हैं तो अनित्य ही रहेगा यह शरीर, यदि भगवन्नामामृत का नित्य पीयूषपान किया जाए, नित्य इस अमृत को पिया जाय तो यह शरीर भी नित्य हो जाएगा |

"याहे पिए सो अमर ह्वै जाय, नाम रस मीठो है |"

लेकिन अस्थिर शरीर से स्थिर प्रभु को हमलोग प्राप्त करने की चेष्टा नहीं करते हैं | बड़ा सुन्दर भाषण दिया धुंधकारी ने, फिर गौकर्ण जी को प्रणाम किया है और बड़ी विचित्र बात कही कि जब जिस कथा के सुनने से (बाँस जड़योनि है) जब जड़योनि फट सकती है तो फिर चित्त की ग्रंथियों का खुल जाना कौन-सी बड़ी बात है | सहज ही हृदय-ग्रंथि (अहंता-ममता) से मुक्त होकर जीव श्रीभगवान् को संप्राप्त कर सकता है | संसार रूपी कीचड़ को 'निष्काम भाव से कहा-सुना गया 'कथा-कीर्तन रूपी निर्मल जल' ही साफ़ करेगा | 'कथा-कीर्तन' ही सबसे सरल-सरस साधन (उपाय) व साध्य है | कथा (श्रीभगवद्गुणगान) ही सारसर्वस्व है | श्रीभगवद्भागवत-कथा ही मोह रूपी दलदल से हमलोगों को बचाएगी | धुंधकारी ने सबको प्रणाम किया और श्रीभगवद्धाम चला गया | इधर गौकर्णजी ने पार्षदों से कहा है कि भैया ! कथा तो बहुतों ने सुनी लेकिन विमान धुंधकारी के लिए ही क्यों आया ? पार्षद बोले – भैया, फल का भेद नहीं, ये तो इनके श्रवण का ही भेद है; सुनी तो सबने लेकिन जितने एकाग्रचित्त के साथ धुंधकारी ने कथा को सुना, निराहार रहकर विधिवत कथा-श्रवण की, वैसा यहाँ कोई श्रोता नहीं है | गौकर्णजी महाराज ने फिर सबके उद्धार के लिए पुनः श्रावण मास में कथा का आयोजन किया है, फिर से कथा का आयोजन किया है और अब जब कथा आरम्भ हुई | सबने ध्यानपूर्वक कथा को सुना क्योंकि समझ गए पहले भी कथा सुनी पर ध्यान से नहीं सुनी गयी तो लाभ नहीं मिला | धुंधकारी प्रेत था लेकिन तत्परता (मनोयोग) के साथ श्रवण-मनन करने के कारण एक कथा में ही विमान में बैठ के चला गया | तो इस बार सभी ने बड़ी एकाग्रता के साथ कथा का श्रवण किया और जब कथा को सुना तो कथा के समाप्ति अवसर पर स्वयं भगवान् उधर पधारे हैं और जैसे ही प्रभु आये हैं तो वहाँ चारों ओर से जयघोष की ध्वनि होने लग गयी | ध्यानपूर्वक श्रवण किया गया, श्रीठाकुरजी साक्षात् आ गये, चित्त की एकाग्रता ने भगवान्

को खींच लिया | प्रभु आये, सबके लिए विमान आया और उसमें बैठ-बैठ कर सब भगवद्धाम को चले गए | सुनने वाले को तो धाम मिल गया, पर सुनाने वाले को क्या मिला | अरे ! सुनाने वाले गौकर्णजी को श्रीभगवान् ने अपने हृदय से लगा लिया जैसे भगवान् ने अपने आपको गौकर्णजी को दे दिया | सुनने वाले ने धाम-प्राप्ति की, सुनाने वाले को भगवान् ने स्वयं को ही दे दिया | अब भगवान् से बड़ी वस्तु होगी कोई दुनिया में ? इससे बड़ी क्या उपलब्धि हो सकती थी गौकर्ण जी महाराज को, कोई उपलब्धि नहीं थी, संभव ही नहीं थी, अपने आपको ही दे दिया श्रीभगवान् ने | जिस समय भगवान् पधारे हैं तो बड़ी जोर से नाम-संकीर्तन हुआ है | श्रीभगवान् का दर्शन करके जितने श्रोता थे, सब कृत्यकृत्य हो गए, भगवान् का साक्षात्कार प्राप्त हो गया, कथा-श्रवण से (गौकर्ण महाराज की कृपा से) नगर के कुत्ते, चांडाल तक को भी छोड़ा नहीं गया, सबको विमान में बैठा लिया गया | श्रीमद्भागवतजी में लिखा है कि जिसके कर्णरंध्र में गौकर्णजी के द्वारा कथा का एक शब्द भी पड़ गया उसका संसार में पुनरागमन ही नहीं हुआ | सदा-सदा के लिए मुक्तावस्था को प्राप्त हो गया | सनकादिक मुनीश्वर ने देवर्षि नारदजी महाराज को सप्ताहयज्ञ की विधि के बारे में आगे सबको बताया, सप्ताह यज्ञ की विधि क्या है ? वक्ता-श्रोता के लक्षण कहे हैं, कथा कैसे सुननी चाहिए, अनुष्ठान कैसे करना चाहिए, सब विधियों का निरूपण हुआ | सनकादिक मुनीश्वरों ने कहा – "हे देवर्षे ! ऐसे वक्ता के मुख से कथा सुनी जाय जो विरक्त हो और वैष्णव हो, भगवद्भक्ति उसके हृदय में हो, वैष्णवता हो, विप्रकुल में उत्पन्न हो और वेद-शास्त्र में पारंगत हो | श्रीभागवतजी के कठिन सिद्धांतों को सुन्दर-सुन्दर उदाहरणों से समझा सके, और ज्यादा बढ़िया है दृष्टान्त में भी कुशल होना चाहिए तथा अति निःस्पृह हो, दो बार एक ही बात को कहा - प्रथम में कहा विरक्त हो और अंत में कहा अति निःस्पृह हो, वक्ता के अन्दर सबसे बड़ी योग्यता यही है कि वह परम विरक्त व अति निःस्पृह (परम निष्काम) हो | वक्ता को कैसा होना चाहिए, यहाँ नारी-पुरुष का झगड़ा नहीं रखा | विरक्त हो, वैष्णव हो, अति निःस्पृह (निष्किंचन) हो, वेद-शास्त्र में बढ़िया पारंगत हो, दृष्टान्त देने में कुशल हो, उसी के मुख से कथा सुनी जाय | श्रोताओं के विषय में कहा कि भगवान् को ही लक्ष्य लेकर कथा सुनी जाए, कथा-मंडप में जब आयें तो श्रीभागवतजी को साक्षात श्रीभगवद्विग्रह मानकर उनको प्रणाम करें | वक्ता को शुभस्वरुप मानकर प्रणाम करें | सहयोगियों को पार्षद परिकर रूप मानकर प्रणाम करें तथा श्रवण करने के पूर्व उनको स्तुति-वंदना आदि से संतुष्ट करें | कथा में होने वाले उत्सवों-महोत्सवों को विधि-विधान से पूर्ण उत्साह के साथ मनाएँ | नारदजी महाराज ने सनकादिक मुनीश्वरों के द्वारा सप्ताह यज्ञ की विधि का श्रवण किया है | श्रीशुकदेवजी महाराज पधारे हैं | स्वर्ग, सत्यलोक, वैकुण्ठ में भी यह भागवत-रस नहीं हैं, यह भागवत-रस केवल धरा-धाम पर ही बह रहा है | इसलिए जितना इसका पान कर सकें, इसका पान करें | कभी इससे चूकना नहीं चाहिए, कभी छोड़ना नहीं चाहिए | नारदजी महाराज ने सनकादिक मुनीश्वरों के द्वारा सप्ताह यज्ञ की विधि का श्रवण किया | हमलोगों ने यहाँ तक संक्षिप्त चर्चा की है श्रीमद्भागवत जी के माहात्म्य की | आगे प्रथम स्कंध के प्रथम श्लोक में परतत्व का वर्णन किया है व्यास जी महाराज ने, जिन प्रभु से सृष्टि का पालन और संहार होता है | अन्वय और व्यतिरेक दोनों पद्धतियों से जो सभी पदार्थों में अनुगत हैं, स्वराट हैं, जिनकी स्वतंत्र सत्ता है, जिन्होंने संकल्पमात्र से ब्रह्माजी को ज्ञान दे दिया, जिस ज्ञान में बड़े-बड़े देवता मोहित हो जाते हैं | पानी में मिट्टी, मिट्टी में पानी, जल में सूर्य-रश्मियों का, सूर्य-रश्मियों में जहाँ जल का भ्रम हो जाता है | अपनी माया से, अपने प्रभाव से जो माया को निरस्त किये रहते हैं; ऐसे सत्यस्वरुप श्रीभगवान् का यहाँ ध्यान किया गया है |

भारतीय-संस्कृति का आधार 'गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति'

डॉ. रामजीलाल शास्त्री 'बी. एस. सी., एम. ए. द्वय् (हिन्दी, संस्कृत), बी.एड. आचार्य (साहित्य), पी. एच. डी., श्रीमानमंदिर व राधारस मन्दिर, गह्वरवन, बरसाना, मथुरा |

प्राचीनकाल में सम्पूर्ण विश्व में भारत की प्रतिष्ठा जगद्गुरु के रूप में थी | प्रत्येक क्षेत्र में भारत की समृद्धि सर्वोपरि थी और इसे सोने की चिड़िया कहा जाता था | इसका मूल कारण था – 'भारत में गुरुकुल-प्रणाली की शिक्षा |'

विदेशी शासकों ने भारत को हमेशा के लिए अपने आधीन बनाये रखने के लिए सबसे पहले गुरुकुल-प्रणाली की शिक्षा और गोधन को नष्ट किया जो सर्वांगीणोन्नति के स्रोत थे | प्राचीनकाल में बाल्यावस्था से ही बालकों को गुरुकुल में भेजा जाता था | गुरुदेव के संरक्षण में शील, सदाचार, ब्रह्मचर्य का पालन, माता-पिता की सेवा, सबके प्रति सौहार्द्र, समाज की निष्काम सेवा, दुर्व्यसनों से दूर रहना आदि दैवी गुणों की प्रायोगिक शिक्षा प्रदान की जाती थी जिससे उनका चरित्र उन्नत होता था और वे समाज के लिए प्रकाश-स्तम्भ बनते थे | विकिपीडिया मुक्त विश्वकोष (Wikipedia the free Encyclopedia) के अनुसार गुरु-शिष्य परंपरा या परंपरा वंश (गुरुकुल) पारंपरिक भारतीय संस्कृति और हिन्दूधर्म, जैनधर्म, सिक्खधर्म और बौद्धधर्म (तिब्बती और जैन परंपरा) जैसे धर्मों में गुरु और शिष्य के उत्तराधिकार को दर्शाती है | यह आध्यात्मिक संबंधों की एक परम्परा है जहाँ एक गुरु (शिक्षक) के द्वारा सद्धी शिष्य (चेला) को पढ़ाया जाता है | ऐसा ज्ञान चाहे वैदिक, स्थापत्य, संगीत या आध्यात्मिक हो गुरु और शिष्य के बीच के विकास के सम्बन्ध के माध्यम से प्रदान किया जाता है | गुरु के वास्तविकता के आधार पर और शिष्य के सम्मान प्रतिबद्धता, भक्ति और आज्ञाकारिता के आधार पर इस सम्बन्ध को सूक्ष्म या उन्नत ज्ञान के लिए सबसे अच्छा तरीका बताया गया | 'गुरु' वस्तुतः शिष्य को उस ज्ञान का दान देता है जो गुरु का प्रतीक है |

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – उपनिषद की प्रारम्भिक मौखिक परम्पराओं में गुरु-शिष्य सम्बन्ध हिन्दूधर्म के एक मूलभूत घटक में विकसित शब्द "उपनिषद्" संस्कृत शब्द उप (पास) नी (नीचे) और सद् (बैठने के लिए) से प्राप्त होता है | इसका अर्थ है कि अनुदेश प्राप्त करने के लिए एक आध्यात्मिक शिक्षक (गुरु) के पास बैठे | महाभारत के भगवद्गीता भाग में कृष्ण और अर्जुन के बीच, रामायण में राम और हनुमान के बीच सम्बन्ध इसके उदाहरण हैं | उपनिषदों में गुरु और शिष्यों में विभिन्न प्रकार के स्वरूपों का दर्शन होता है | उदाहरण के लिए एक पति अमरता के लिए सवालों का जवाब दे रहा है | एक युवा लड़का मृत्यु के देवता यम द्वारा सिखाया जा रहा है | कभी-कभी ऋषि महिलायें होती हैं और उनके निर्देश राजाओं द्वारा ग्रहण किए जाते हैं |

श्रुति परम्परा - वैदिक धर्म में श्रुतियों के अनुसार गुरु-शिष्य परंपरा का महत्वपूर्ण स्थान है | श्रुति से 'श्रौत' शब्द का निष्पादन हुआ है जिसका अर्थ है - सुना हुआ | श्रौत परम्परा विशुद्ध रूप से गुरु-मुख से सुने ज्ञान को शिष्य द्वारा श्रद्धापूर्वक धारण करना है |

शक्तिपात - गुरु अपने ज्ञान को शिष्य के शुद्ध अंतःकरण में अपनी शक्ति से इस प्रकार आधान करता था कि वह आत्मसात कर ले | गुरुदेव द्वारा शक्तिपात करने से उनकी कृपा से उसे सभी प्रकार का ज्ञान हो जाता था |

भक्तियोग - गुरु-शिष्य के सम्बन्ध का सर्वोत्तम प्रारूप भक्तियोग है | भक्ति का अर्थ है – 'समर्पण |' ऐसा समर्पण जैसा कि भगवान् के लिए हो | गुरुदेव में देवतुल्य पूज्यता का भाव रखा जाए |

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ |
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ||

(श्वेताश्वतरोपनिषद् ६/२३).

प्रपत्ति – 'प्रपत्ति' का अर्थ है - अपनी अहंता का नाश, अपनी अहंता को नीचे ले जाना अर्थात् अपनी सत्ता का नाश | शिष्य की अपनी कोई इच्छा नहीं रहती | गुरुदेव या भगवान् की इच्छा ही उसकी इच्छा रहती है | उसी में वह प्रसन्न रहता है |

परम्परा और सम्प्रदाय - प्राचीन भारतीय संस्कृति में गुरु के द्वारा शिष्य को किसी प्रकार का कोई ज्ञान हो, आगे आने वाली पीढ़ी में एक के बाद एक को प्राप्त होता रहता है, इसे परंपरा कहते हैं और इस प्रकार स्थापित परम्परा को सम्प्रदाय कहा जाता है | वेदों में ब्रह्म का ज्ञान (ब्रह्मविद्या) गुरु द्वारा मौखिक रूप से शिष्य को दिया जाता था और वे इस ज्ञान को धारण कर लेते थे, उन्हें श्रुतधर कहा जाता था | वैदिक संस्कृति के अनुसार छोटी अवस्था में बाल्यावस्था से ही ब्रह्मचारी बालकों को गुरुकुल (गुरु आश्रम) में विद्या पढ़ने के लिए भेजा जाता था, जहाँ गुरुदेव या आचार्य के संरक्षण में वेद और वेदांगों का अध्ययन कराया जाता था | वहाँ शिष्यों को समस्त सद्ग्रंथों का सार भगवदाराधन (कथा-कीर्तन) रूपी महायज्ञ करने की प्रक्रिया भी सिखाई जाती थी | गुरुकुल में निवास की अवधि मनुस्मृति के अनुसार १२ वर्ष, ३६ वर्ष और ४८ वर्ष तक हुआ करती थी | गुरुकुल में निश्चित् समय तक रहने के बाद ब्रह्मचारी वेद-शास्त्रों में नैपुण्य प्राप्त कर जब घर लौटता था, उसे समावर्तन कहा जाता था | हिन्दुओं का यह गुरुओं द्वारा वैदिक ज्ञान का प्रदान शिष्यों के लिए समयानुसार मौखिक रूप से होता रहा | आधुनिक समय में वैदिक अध्ययन करने वाले छात्र अब पुस्तकों का आश्रय लेने लगे हैं |

हिन्दू-धर्म के विस्तृत क्षेत्र में गुरु-शिष्य सम्बन्ध के विभिन्न प्रकार : - अद्वैत वेदान्त :- अद्वैत वेदान्त की शिक्षा के लिए गुरु के अन्दर निम्नलिखित ज्ञान का होना आवश्यक है |

श्रोत्रिय- वैदिक ग्रंथों और सम्प्रदाय का विस्तृत ज्ञान हो |

ब्रह्मनिष्ठ – ब्रह्म की एक निष्ठता का ज्ञान अर्थात् सब जगह उसे उसी ब्रह्म की सत्ता की अनुभूति हो | शिष्य को चाहिए - गुरु की तन, मन, धन से सेवा करे | मन में किसी प्रकार का कोई प्रश्न या संशय हो तो बड़ी विनम्रता से गुरुदेव से निवेदन करके अपनी शंका का निवारण कर ले | अद्वैत के अनुसार जन्म-मृत्यु के चक्कर से छुटकारा पाकर गुरुदेव की कृपा से शिष्य मोक्ष प्राप्त कर लेता है | प्राचीनकाल की 'गुरुकुल-शिक्षा-प्रणाली' के अनुसार प्राप्त शिक्षा के चार उद्देश्य होते थे – १. धर्म २.अर्थ ३.काम ४. मोक्ष | वर्तमान शिक्षा के उद्देश्यों में धर्म और मोक्ष है ही नहीं, अर्थ और काम रह गए हैं | यही कारण है चारों ओर अशांति है, दुःख है | सुख-शान्ति की वृद्धि के लिए मानव-जीवन को सार्थक बनाने के लिए **'गुरुकुल शिक्षा प्रणाली'** के आदर्शों को अपनाना होगा | हमारे पूज्य महाराज जी जो पूज्य श्री रमेश बाबा के नाम से प्रसिद्ध हैं, पिछले ६५ वर्षों से श्रीमानमंदिर बरसाना में रह रहे हैं, ब्रज छोड़कर कहीं नहीं जाते हैं, जब से आये हैं उन्होंने ब्रज का नाश ही देखा और ब्रज के संरक्षण के लिए अपने प्राण की बाजी लगा दी | देवतुल्य पर्वतों का जो माफियाओं द्वारा खनन हो रहा, ७-८ साल उसके लिए संघर्ष किया और अन्त में वह रुक गया | जगह-जगह वृक्ष लगवाये | श्रीयमुना नदी को मुक्त एवं शुद्ध कराने के लिए संघर्ष किया, वह अब भी जारी है | 'श्रीमाताजी गौशाला' खोलकर स्लौटर (वध) होने वाली गायें, साँड़, बछड़े आदि गौवंश की रक्षा की | आज श्रीमाताजी गौशाला में लगभग ५५ हजार से अधिक गौवंश है, जिसमें गायों की मातृवत् सेवा होती है | बाल एवं युवा पीढ़ी को सुसंस्कारित करने के उद्देश्य से मानमंदिर में 'दीदीजी गुरुकुल' की स्थापना की गई है | इस समय गुरुकुल में

लगभग १५० बालक-बालिकाएँ हैं जो १२ साल की आयु से कम के हैं | गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के अनुसार मानमंदिर में रहने वाले सुयोग्य साधु-संत इन बाल विद्यार्थियों को पढ़ाते हैं और भक्ति के अच्छे संस्कार देते हैं | गुरुकुल में रहने वाले बाल आराधकों के भक्तिमय संस्कारों से प्रभावित होकर बालकों के माता-पिता बच्चों को स्वयं छोड़ जाते हैं | यहाँ किसी बालक से कोई शुल्क नहीं लिया जाता है | पूज्य महाराजजी के संरक्षण में प्रतिवर्ष शरद पूर्णिमा से २ दिन पूर्व से ब्रज-चौरासी कोस की ४० दिवसीय श्रीराधारानी ब्रजयात्रा प्रारंभ होती है जिसमें लगभग १५ हजार से अधिक यात्रीजन रहते हैं, इस विशाल ब्रजयात्रा में भी किसी से कोई शुल्क नहीं लिया जाता है | पूज्य महाराज जी के यहाँ प्रातः नित्य ८:०० बजे से ९:३० बजे तक सत्संग प्रवचन होता है एवं सायं ६:०० बजे से ७:३० तक नृत्य-गानमय संकीर्तन होता है, जिसको ब्रजवासी महारास के नाम से कहते हैं | इसमें सैकड़ों आराधिकाएँ, एक साइड में गुरुकुल के बच्चे व एक साइड में साधु-संत व अन्य भक्तजन नृत्य करते हुए रसमयी आराधना करते हैं | विश्वमंगलकारी इस रसमयी आराधना में नित्य सैकड़ों भक्तजन साक्षात् दर्शन-लाभ लेकर आनंदित होते हैं | इन द्वियकालिक सत्संग के website www.Maan mandir.org से नित्य live देखे जा सकते हैं | देश-विदेश में सब जगह इस वेबसाईट से मानमंदिर के सभी कार्यक्रम, गौशाला, यात्रा, सत्संग आदि देखे जा सकते हैं | यू ट्यूब से Maan mandir.org type करके कोई भी जन देख सकते हैं और सत्संग का सम्यक् लाभ प्राप्त कर सकते हैं |

जिसमें अहम् नहीं है और जिसकी बुद्धि लिप्त नहीं है, 'लिप्त' अर्थात् कहीं चिपकी नहीं है, आसक्त नहीं है; वह यदि सारे संसार की हत्या भी कर दे, फिर भी उसे पाप नहीं लगेगा। इसलिए अहम् से रहित होकर कर्म करना चाहिए।

होली रसिया

सखी री मोर मुकट वारो सांवरिया मोय मिल्यो सांकरी खोर ॥

गली सांकरी ऊँची नीची घाटियाँ,
दी है मटुकिया फोर।
रतन जटित मेरी इंडुरी जामें
हीरा लाख करोर।
एकौ हीरा जो खोवै तेरी,
सब गायन कौ मोल।
जैसी बजै तेरी बांसुरी रे मेरे,
नूपुर की घनघोर।
कृष्ण जीवन 'लच्छीराम' के प्रभु पर,
डारूंगी तिनका तोर।

'मान मन्दिर कला अकादमी' की प्रस्तुति –

नाटिका **'द्रौपदी चरित्र"** ३ मार्च २०२०

समय- रात्रि ८ बजे से १२ बजे तक

स्थान- रसमण्डप, गह्वरवन, बरसाना